भारतीय वाङ्मय

हिन्दी तथा अहिन्दीभाषी क्षेत्रों के साहित्यिक-सांस्कृतिक समाचारों की मासिक पत्रिका

वर्ष 8 | **अक्टूबर** 2007 | **अंक** 10

पुस्तकें

अक्षर विश्व को बचाना जरूरी है। पुस्तक की मृत्यु मानवीय अस्मिता और उसकी श्रेष्ठ उपलब्धि की भी मृत्यु होगी। **—श्यामाचरण दुबे**

हमारे देश के लोगों में पुस्तकों की भूख बढ़ रही है। लोग अच्छी पुस्तकें तलाशते हैं। ज्ञान की बढ़ रही पिपासा की शान्ति के लिए लोग अपनी मातृ-भाषा में पुस्तकें चाहते हैं।

पठन अभिरुचि के विकास में छोटे प्रकाशकों की भागीदारी को सुनिश्चित करने के लिए प्रयास किए जाने चाहिए। **—महाश्वेता देवी**

भारत की विविधता की खूबसूरती को जानने का सबसे सहज तरीका है यहाँ के विभिन्न भाषाओं के साहित्य व उनका अन्य भाषाओं में अनुवाद को पढ़ना। **—प्रो० विपिन चंद्रा**

पिछली एक सहस्त्राब्दि के दौरान हुई नई खोजों में पुस्तक सबसे महत्त्वपूर्ण आविष्कार रहा है। यह विश्व में राजनीतिक लोकतंत्र की स्थापना से पहले की खोज है। भारत का स्वतंत्रता संग्राम दुनिया भर में अनूठा है क्योंकि इसकी कमान लेखकों के हाथ में थी। इकबाल, टैगोर, निराला, प्रेमचंद, सुब्रह्मण्यम भारती जैसे लेखकों ने राजनीतिक स्वतंत्रता मिलने से बहुत पहले ही वैचारिक स्वतंत्रता प्रदान कर दी थी।

—अशोक वाजपेयी

निज भाषा उन्नति अहै, सब उन्नति को मूल।
बिन निजभाषा ज्ञान के, मिटत न हिय को सूल॥
करहु बिलम्ब न भ्रात अब, उठहु मिटावहु सूल।
निज भाषा उन्नति करहु, प्रथम जो सब को मूल॥
विविध कला शिक्षा अमित, ज्ञान अनेक प्रकार।
सब देशन से लै करहु, भाषा माहिं प्रचार॥
प्रचलित करहु जहान में, निज भाषा करि यत्न।
राज काज दरबार में, फैलावहु यह रत्न॥

—भारतेन्दु हरिश्चन्द्र

(रचना काल-जून 1877, हिन्दी वर्द्धिनी सभा, इलाहाबाद में दिए गए भाषण का एक अंश)

भारतीय आस्था का प्रतीक रामसेतु

सेतु समुद्रम परियोजना के सन्दर्भ में भारत सरकार द्वारा सर्वोच्च न्यायालय में प्रस्तुत शपथ-पत्र ने देश में सुनामी जैसा तूफान खड़ा कर दिया है। शपथ-पत्र में कहा गया गया, राम का कोई अस्तित्व नहीं, सारी राम कथा काल्पनिक रचना है। वाल्मीकि रामायण, रामचरितमानस, माइथोलॉजिकल ग्रन्थ हैं। राम और रामसेतु को इनके आधार पर स्वीकार नहीं किया जा सकता। इस शपथ-पत्र में कानून मंत्री श्री हंसराज भारद्वाज तथा संस्कृति मंत्री अम्बिका सोनी की संयुक्त भूमिका है। जनाक्रोश उभरने पर दोनों ने इससे पल्ला झाड़ लिया। कानून मंत्री को संविधान और कानून फिर से पढ़ लेना चाहिए, संविधान में विवादग्रस्त स्थिति में आस्था और विश्वास को वरीयता दी गई है।

भारतीय पुरातत्त्व सर्वेक्षण रामकथा को मिथक और आख्यान मात्र मानता है। पुरातत्त्व ने अभी तक भग्नावशेषों का उत्खनन कर देश के भौतिक इतिहास का सर्वेक्षण किया है। देश की आस्था, विश्वास और परम्परा का भी इतिहास होता है जिसके भौतिक भग्नावशेष नहीं होते। वे लोकजीवन और परम्पराओं में व्याप्त होते हैं। भारतीय इतिहास ईसा पूर्व की 8-10 शताब्दी तक सीमित नहीं है। पुरातत्त्वविदों ने कभी जनमानस का उत्खनन किया होता जो मिथक कहे जाने वाले ग्रन्थों में ही नहीं लोकजीवन में भी व्याप्त है।

तमिलनाडु के मुख्यमंत्री एम० करुणानिधि भगवान राम और रामसेतु के अस्तित्व पर प्रश्नचिह्न खड़े कर रहे हैं, पूछ रहे हैं राम ने कहाँ से सेतु निर्माण इंजीनियरिंग की शिक्षा प्राप्त की थी। इसका उत्तर 9वीं शती में कवि चक्रवर्ती महर्षि कम्बन ने **कम्ब रामायण** में विस्तार से दिया है। तमिल की काव्य पंक्तियों का उल्लेख करते हुए यहाँ हिन्दी अनुवाद प्रस्तुत है—

नल ने मन में सेतु का नक्शा बना रखा था। उसी के अनुरूप बनाने में चित्त देकर उसने पत्थरों को सम रूप से काटा-छाँटा। फिर सम रीति से चुन रखा। वैसे ही गिरियों को ठीक तरह से सजाया, बालू फैलाया और अपने हाथों से दबा-सहलाकर उनके सिरों को सम किया। (661)

(नल ने और भी करामात दिखायी!) सहस्र कोटि वानर छाती से लगा लेकर पर्वत लाते रहे और फेंकते रहे। उन असंख्यक पत्थरों को नलने अपने लौह स्तम्भों-सम हाथों में पकड़ा। तब जो पर्वत बचकर नीचे गिरे उन्हें उसने अपने पैरों से रोककर पैरों पर रख लिया। (662)

बड़े भारी व स्थूल पर्वतों को ढोते हुए अनेक वानर वीरों की सेना-सी खड़ी थी। तब कुछ वानरों को आगे जाने के लिए रास्ता नहीं मिल रहा था। इसलिए वे पर्वतों को सिर पर धारण किये हुए तैरकर गये। (664)

सभी दिशाओं में वानर आते-जाते दिखायी देते हैं। कुछ पूछते हैं कि सेतु कहाँ तक बढ़ा है? कुछ वानर उत्तर देते हैं कि आधा बन गया है। (666)

शेष पृष्ठ 2 पर

पृष्ठ 1 का शेष

तीन दिन पूरे हुए और सेतु का छोर त्रिकूट पर्वत पर स्थित लंका को स्पर्श कर गया। तब जो कोलाहल, हर्षनाद उठा, उससे आकाश ही फट गया। तो अब का यह आकाश किसी और अण्ड का आकाश है क्या? (679)

प्रेमोत्साह के साथ सेतु बनाने के बाद वनजीवी वानरों का नायक, गण्य भाले का धारक लंकेश विभीषण और अन्य लोग श्रीराम के पास आये। (684)

जगन्नाथ श्रीराम के पास पहुँचकर उन्होंने उनके चरणों पर नमस्कार किया और निवेदन किया कि सौ योजन लम्बा और दस योजन चौड़ा यह सेतु बन गया है। (685)

पुरुष श्रेष्ठ श्रीराम का मन, यह समाचार सुनकर, प्रेम से भर गया। उन्होंने अपने दीर्घ हाथों से उन्हें गले लगा लिया। उन्हें सेतु को देखने की उत्कण्ठा हुई और बढ़ी। उन्होंने कहा कि झट उठो जाएँ! (686)

करुणानिधि के मुख्यमंत्रित्व काल 1972 में प्रकाशित सरकारी गजेटियर में रामसेतु और भगवान राम द्वारा राम सेतु निर्माण का उल्लेख है। गजेटियर में रामसेतु के बारे में लिखा गया है कि रामेश्वर धनुष आकार का एक द्वीप है, जिसे राम का धनुष कहा जाता है। इसे सेतु या तटबंध मार्ग भी कहा जाता है। इस स्थान पर श्रीराम ने लंका जाने के लिए पुल का निर्माण किया था। प्राक्कथन में करुणानिधि ने लिखा था—यह गजेटियर एक सन्दर्भ ग्रन्थ साबित होगा जिससे लोगों को देश की परम्पराओं की जानकारी मिलेगी। नास्तिक करुणानिधि के नेत्रों पर लगा काला चश्मा राम, रामसेतु और देश के जनमानस में व्याप्त राम को नहीं देख पाता।

राम ने रामसेतु से समुद्रलंघन किया था, किन्तु उनके भक्त कम्बोडिया तक चले गये। कम्बोडिया स्थित धार्मिक उपासना का विश्व का विशालतम स्थल अंकोरवाट का भव्य मन्दिर अपनी भित्तियों पर मोहक मूर्तिकला को उकेरे हुए समूची रामायण और महाभारत कथाओं का दर्शन कराता है।

दूसरी ओर मानव संसाधन मंत्रालय ने राम और महाभारत के भीष्म पितामह के आर्ष वचनों को लोक प्रशासन तथा प्रबन्धन के पाठ्यक्रम में सम्मिलित किया है। राम वनवास के समय राम ने भारत को सुशासन के सम्बन्ध में परामर्श और उपदेश दिये थे। इसी प्रकार शरशय्या पर लेटे भीष्म पितामह ने युधिष्ठिर को लोकसेवा के सम्बन्ध में कुछ सलाह दी थी।

आज देश में व्याप्त अनाचार, अत्याचार, भ्रष्टाचार इसलिए है कि हमने राम के आदर्शों को भुला ही नहीं दिया, उसका उपहास कर रहे हैं। गाँधीजी की समाधि से आज भी ध्वनि निकल रही है—हे राम!

राम और रामसेतु क्या जनमानस की कल्पना मात्र है। समस्त भाषाओं में राम, रामकथा, रामसेतु, सीताहरण, राम-रावण युद्ध का उल्लेख है, क्या उन भाषाओं के पास और कोई कथानक नहीं था। हे राम! की आर्त पुकार करते जन-जन के मानस से राम को कल्पनाप्रसूत कहकर दूर कर सकेंगे?

13वीं शती की तेलुगु की रंगनाथ रामायण, 16वीं शती की कन्नड़ तोखे रामायण, 18वीं शती को ओड़िया बैदेहीश-विलास, विचित्र रामायण, 15वीं शती की बंगला की कृतिवास रामायण, 14वीं शती की असमिया माधवकन्दली रामायण, 14वीं शती की श्रीमोल्ल रामायण सभी एक स्वर से रामसेतु को स्वीकार करती हैं। शताब्दियों से ज्ञात रामसेतु केवल राम आस्था का प्रतीक नहीं है, यह हमारे देश के पूर्वी तट की सुनामी जैसी आपदाओं से रक्षा भी करता है।

जहाजरानी मंत्री टी०आर० बालू रामसेतु को सामान्य प्राकृतिक शिलाखण्ड मानकर सेतु समुद्रम जहाजरानी परियोजना लागू करने पर अड़े हुए हैं।

तुलसीदास के बहुत पहले कबीर ने कहा—'राम नाम का मरम है आना' राम नाम का वह मरम क्या था—राम शब्द शूद्र और पिछड़ी जातियों की शक्ति था और आज भी गाँव-गाँव में जाति-जाति में राम व्याप्त हैं। राम भौतिक सेतु नहीं लोकजीवन का वह सेतु है जिस पर चलकर लोक हर दु:ख को भूलकर जीवन शक्ति प्राप्त करता है। आस्था-विश्वास और परम्परा वह सेतु है जिसने देश के सभी भागों को एक-दूसरे से जोड़ रखा है, उस सेतु को मत तोड़िए, नहीं दो देश बिखर जायेगा।

सुदूर देशों में गये बँधुआ मजदूरों के वंशज फिजी, मारीशस, गुयाना और सूरीनाम तुलसीदास के रामचरितमानस की चौपाइयों को याद करते गये और आज भी राम उनके दैनिक जीवन के आध्यात्मिक संबल हैं। वर्तमान सरकार गाँधीजी और उनके रामराज्य को सत्ता की होड़ और राजनीतिक महत्वाकांक्षा में मिटा देना चाहती है। ऐसी स्थिति में—

रामसेतु सत्य है,
किसकी होनी गत्य है?

—पुरुषोत्तमदास मोदी

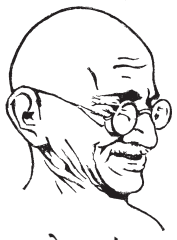

हे राम!

तीस जनवरी मार्ग पर स्थित बिड़ला भवन में गाँधीजी की समाधि से उस दिन पुन: आह निकली—हे राम! जब भारत सरकार ने सर्वोच्च न्यायालय में शपथ-पत्र दाखिल किया—राम काल्पनिक हैं, रामायण, रामचरितमानस सभी काल्पनिक हैं। न राम थे, न रावण था, न सीता थी न, सीता का हरण हुआ था, न राम ने रामसेतु बनाया, न राम ने रावण मारकर सीता को मुक्त कराया।

दूसरे दिन गाँधी की आह इन्दिरा गाँधी की पुत्रवधू सोनिया गाँधी को लग गई और सरकार अपने शपथ-पत्र से पलट गई।

उतना पाता सार

पुस्तक पढ़कर पुस्तक लिखकर लोग कमाये नाम।
कालिदास, तुलसी, ग़ालिब, इकबाल सभी सरनाम॥
हुए सभी सरनाम पुस्तकों ने है कियाकमाल।
लोगों का जीवन भी बदला बदली उनकी चाल॥
कहते राम अवतार सुखों का यार न पारावार।
डूबा जितना जो भी इनमें उतना पाता सार॥

—डॉ० रामअवतार पाण्डेय, वाराणसी

वह दिन कब आयेगा जब सरकार धर्म निरपेक्षता की भ्रामक धारणा से निकलकर श्रीमद्भगवदगीता को प्रशासनिक प्रतियोगिता परीक्षा में सम्मिलित करेगी। गीता धर्म ग्रन्थ नहीं विवेक जागृत करने वाला ग्रन्थ है। यह कर्त्तव्य-अकर्त्तव्य का ज्ञान देती है। इलाहाबाद हाईकोर्ट ने इसी आधार पर गीता को राष्ट्रीय ग्रन्थ घोषित करने को कहा।

ज्ञान साम्प्रदायिक या अछूत नहीं होता वह कहीं से किसी दिशा से किसी भाषा में आये वह सर्वग्राह्य होता है। **—पु०दा० मोदी**

दुर्गापूजा : साहित्यिक-सांस्कृतिक पर्व

—पुरुषोत्तमदास मोदी

बंगाल में दुर्गापूजा धार्मिक अनुष्ठान मात्र नहीं है। एक साहित्यिक तथा सांस्कृतिक पर्व है। इस पर्व पर बांग्ला की विभिन्न पत्र-पत्रिकाएँ दुर्गापूजा विशेषांक प्रकाशित करती हैं। वर्ष पूर्व से ही इनकी योजना बनती है। प्रमुख लेखकों, मुख्यत: कथा लेखकों से इस अवसर के लिए उपन्यास माँगे जाते हैं। एक लेखक दो-दो तीन-तीन उपन्यास एक साथ लिख कर देते हैं। बिमल मित्र पूजा विशेषांकों के लिए उपन्यास लिखते थे। उसकी थकान मिटाने के लिए वे काशी आते थे, हमारे अतिथि होते थे। बंगाल में पूजा तथा अन्य अवसरों पर पुस्तक भेंट करने की परम्परा है। बांग्लावासी जहाँ भी होते हैं बांग्ला अखबार, पत्र-पत्रिका अवश्य मँगाते हैं। बांग्ला के प्रमुख पत्र आनन्द बाजार पत्रिका ने दुर्गापूजा के पूर्व 344 पृष्ठों का पूजा विशेषांक प्रकाशित कर दिया है जिसमें चार उपन्यास हैं। 'पत्रिका शारदीय' नाम से दूसरा विशेषांक भी प्रकाशित है जिसमें तीन उपन्यास हैं। 'आनन्द मेला' विशेषांक में पाँच उपन्यास 'दैनिक प्रतिदिन' के शारदीया विशेषांक में दस उपन्यास छप रहे हैं।

क्या किसी भाषा में एक ही समय एक साथ तीन सौ उपन्यासों का छपकर पाठकों के हाथ में पहुँचना सम्भव है? बांग्ला में ही सम्भव है। बांग्ला की विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं के पूजा विशेषांकों में इस बार तीन सौ से ज्यादा उपन्यास छप रहे हैं। कई पूजा विशेषांक बाजार में आ चुके हैं, कई जल्द स्टॉल पर दिखेंगे।

बंगाल में दुर्गा पूजा के अवसर पर शारदीया विशेषांकों के जरिए विपुल साहित्य के प्रकाशन की पुरानी परम्परा रही है। दुर्गा पूजा में अभी एक महीना से ज्यादा समय बाकी है, पर 'आनन्द बाजार पत्रिका' का 344 पृष्ठों का पूजा विशेषांक बाजार में उपलब्ध हो चुका है। इसकी कीमत 40 रुपये है। इसमें चार उपन्यास छपे हैं। 'आनन्द बाजार पत्रिका' ने एक और विशेषांक निकाला है। उसका नाम 'पत्रिका शारदीया' है। 300 पृष्ठों वाले इस विशेषांक की कीमत 25 रुपये है। इसमें तीन उपन्यास छपे हैं। 'आनन्द मेला' का शारदीया विशेषांक भी छप चुका है। इसमें पाँच उपन्यास छपे हैं। 'दैनिक प्रतिदिन' के सम्पादक सृंजय बोस ने बताया कि उनके शारदीया विशेषांक में दस उपन्यास छाप रहे हैं।

पत्रिकाओं के पूजा विशेषांक बांग्ला में महालया के पहले आ जाएँगे। इस बार उपन्यासों की संख्या भले तीन सौ से ज्यादा हो, उपन्यासकारों की संख्या सौ ही है, क्योंकि औसतन हर उपन्यासकार ने विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं के लिए तीन उपन्यास लिखे हैं।

क्या हिन्दी में यह सम्भव है? किसी समय हिन्दी के पत्र दीपावली विशेषांक प्रकाशित करते थे जिनमें विशिष्ट साहित्यिक रचनाएँ छपती थीं। किन्तु अब स्थिति सर्वथा भिन्न हैं। अपराधजन्य समाचारों को विस्तार से सचित्र प्रकाशित कर हिन्दी पाठकों की मानसिकता को संवेदनशून्य कर दिया है। आज हिन्दी पुस्तकों के पाठकों की संख्या निराशाजनक है। हिन्दी समाचारपत्र अपने पत्रों में पुस्तकों की चर्चा करने में संकोच बरतते हैं, जबकि हिन्दी का विशाल क्षेत्र है। इलेक्ट्रॉनिक मीडिया भी अपराधजन्य दृश्य चित्रों की पुनरावृत्ति कर दर्शकों को संवेदनशून्य करते जा रहे हैं। काश! ये पत्र आगे आने वाले भविष्य की चिन्ता करते।

किताबों की जगह

हिन्दी समाज में कितने लोग किताब पढ़ते हैं? अभी राजधानी में पुस्तक मेला सम्पन्न हुआ। किताबें न बिक पाने से हताश प्रकाशकों ने मेले के आखिरी दिनों में ग्राहकों को आवाज लगाकर बुलाया, फिर भी बात नहीं बनी। छोटे-मोटे प्रकाशकों का दर्द है कि मेले में स्टॉल का किराया जितना होता है, उतने की किताबें नहीं बिकतीं। साहित्यिक किताबें तो बिलकुल नहीं बिकतीं। कोर्स की, कैरियर की और आध्यात्मिक पुस्तकों की ही थोड़ी-बहुत माँग है। यह आज की नहीं, करीब दशक भर पहले की थ्योरी है कि टेलीविजन ने पढ़ने की संस्कृति खत्म कर दी है। आज तो इंटरनेट का भी प्रसार काफी बढ़ गया है। लेकिन यह नहीं माना जा सकता कि इनकी वजह से किताबों की जगह कम हो गई है। टेलीविजन-इंटरनेट तो पूरी दुनिया—पूरे देश की सच्चाई है। सभी जगह किताबों की जगह कहाँ सिकुड़ी है? देश के शिक्षित और सजग राज्यों में से एक पश्चिम बंगाल की बात करें। वहाँ इस बार दुर्गापूजा के अवसर पर प्रकाशित होने वाली शारदीया पत्रिकाओं में करीब 300 उपन्यास छपे हैं। तीन-साढ़े तीन-सौ पृष्ठों के ऐसे विशेषांक भी एक नहीं, कई हैं। वहाँ दुर्गा पूजा के अवसर पर लोग नए कपड़ों के साथ पूजा विशेषांक भी खरीदते हैं। कई लोग तो एक से ज्यादा पत्रिकाएँ खरीदते हैं। महाराष्ट्र में दस दिन व्यापी गणेशोत्सव में भी किताबों की यही संस्कृति देखने को मिलती है। लिहाजा यह कहना गलत है कि टेलीविजन-इंटरनेट ने किताबों को हाशिये पर डाल दिया है। यह जताना भी भ्रामक है कि कहानी-कविता और उपन्यास के पाठक नहीं हैं। हिन्दी के लोग बंगाल, महाराष्ट्र या दक्षिण की तरह पुस्तक प्रेमी कभी नहीं रहे, लेकिन तीन-चार दशक पहले तक यहाँ पढ़ने की संस्कृति थी। तब छोटी जगहों में पुस्तक मेले आज की तरह भले आयोजित न होते रहे हों, लेकिन किताबों की दुकानें जरूर होती थीं, लोग डाक से भी पुस्तकें मँगाते थे। कई अखबार और पत्रिकाएँ दीपावली के अवसर पर विशेषांक निकालती थीं, कई आज भी निकलते हैं। लेकिन इन विशेषांकों को खरीदने-पढ़ने की वैसी ललक दिखाई नहीं देती। सूचना प्रौद्योगिकी के प्रसार और युवा वर्ग की बढ़ती महत्वाकांक्षा ने हिन्दी समाज को किताबों से दूर कर दिया है। पुस्तक मेले हैं, लेकिन वे प्रकाशकों, थोक खरीदारों और साहित्यकारों तक सीमित रह गए हैं, उनमें पाठकों की व्यापक भागीदारी नहीं है। हिन्दी में किताबों के प्रति यह उदासीनता तब है, जब भूमण्डलीकरण ने इस भाषा के प्रति देश से बाहर भी पर्याप्त उत्सुकता जगा दी है। एक समय हिन्दी में पठन-पाठन की संस्कृति विकसित करने के लिए आन्दोलन की जरूरत बताई जाती थी। सूचना प्रौद्योगिकी के इस दौर में तो ऐसे आन्दोलन की बात करना भी बेमानी है।

'अमर उजाला' से

श्रेष्ठ पुस्तकें

श्रेष्ठ पुस्तकें ज्ञान बढ़ातीं।
जन-जन को सन्मार्ग दिखातीं॥
देकर विविध ज्ञान हम सब के
मन का वे अज्ञान मिटातीं।
मन-मोहक चित्रों के खातिर
बच्चों की भी प्रिय बन जातीं।
श्रेष्ठ पुस्तकें ही छात्रों को
काफी अच्छा मार्क्स दिलातीं।
सबको ये सद्शिक्षा देकर
अच्छे संस्कार सिखलातीं।
श्रेष्ठ पुस्तकें निज लेखक को
पुरस्कार-सम्मान दिलातीं।
श्रेष्ठ पुस्तकें ही मनुष्य को,
गरिमामय पद पर पहुँचातीं।
इसीलिए तो सरस्वती-सी,
सदा पुस्तकें पूजी जातीं।

—डॉ० त्रिलोकी सिंह, इलाहाबाद

नामवरजी का कूड़ा प्रपंच

—कान्तिकुमार जैन

पिछले कुछ महीनों से जब भी मैं फल खरीदने जाता हूँ तो देख लेता हूँ कि नामवरजी कहीं आसपास टहल तो नहीं रहे। अंगूर खरीदते

समय नामवरजी की उपस्थिति से डर नहीं लगता पर आम खरीदते वक्त लगता है। मैं फल वाले से कहता हूँ—भैया, ढाई सौ ग्राम अंगूर देना और वह बाएँ हाथ से अंगूरों का एक गुच्छा उठाता है, एक नजर देखता है और दाहिने हाथ की कैंची से गुच्छे के सड़े-गले, सूखे-पिचके दानों को काटकर अलग कर देता है। मुझे वह जो गुच्छा सौंपता है, उसका एक-एक दाना चिकना, चमकदार और रसदार होता है। फिर अंगूरों के साथ न बीज का लफड़ा होता है, न छिलके या गुठली का। पर आमों के साथ ऐसा नहीं होता। आम कितना भी सुगन्धित और स्वादिष्ट क्यों न हो, उसमें छिलका भी होता है और गुठली भी। किसी में गुठली छोटी हो पर होती जरूर है। आम खरीदते हुए यदि नामवरजी कहीं आसपास हुए तो धीरे से बड़े भाई की तरह मेरे पीछे आकर खड़े हो जाएँगे, कन्धे पर हाथ रखेंगे और कहेंगे—यह आप क्या कर रहे हैं? जानते नहीं कि इनमें से एक तिहाई तो छिलका और गुठली में ही निकल जाएगा। मैं नामवरजी की बात का बुरा नहीं मानता। उनकी आदत से परिचित हूँ। पर उनसे यह कहने से भी बाज नहीं आता कि छिलके और गुठली के डर से कोई आम खाना तो बन्द नहीं कर देगा।

यह अंगूर और आम वाली बात मुझे पिछले दिनों नामवरजी द्वारा छायावाद के सुकुमार कवि, कल्पना के राजकुमार सुमित्रानंदन पंत के काव्य के एक तिहाई को कूड़ा करार दिए जाने से सूझी। नामवरजी रामभरोसे की पान की गुमटी पर या देर रात ग्राण्ड होटल में रसरंजन करते हुए यह सब कहते तो मैं क्या, कोई भी उनकी बात को सीरियसली नहीं लेता पर नामवरजी ने यह बात पिछले दिनों वाराणसी में 'महादेवी वर्मा : वेदना और विद्रोह' शीर्षक दो दिवसीय राष्ट्रीय संगोष्ठी के उद्घाटन के अवसर पर साहित्यकारों, कला मर्मज्ञों और बुद्धिजीवियों से भरी सभा में दिनदहाड़े, पूरे होशोहवास में कही। लोग भड़के, नामवरजी चाहते भी यही थे। वे जानते थे कि वे जो कुछ कह रहे हैं, उसकी अनुगूँजें बहुत दूर तक और बहुत देर तक हिन्दी की पत्र-पत्रिकाओं में और चतुर सुजानों के बीच तुमुल कोलाहल मचाती रहेंगी। जब वे महादेवीजी की वेदना और विद्रोह के जलाशय में पंतजी की कविता का कूड़ा फेंक रहे थे तो उनकी दृष्टि में न महादेवीजी थीं, न ही पंतजी। उनकी दृष्टि में तो बस वे ही थे। उनका 'निमित्त' अर्सा हुआ हो चुका था, बनारस और इलाहाबाद की ऑक्सफोर्ड और कैंब्रिज से की गई तुलना भी लोग भूलने लगे थे सो उन्होंने अपनी रणनीति कुशल अंतरात्मा से जिज्ञासा की—हे महीयसी अन्तरात्मा—अब मेरा क्या कर्त्तव्य है। नामवरजी की अंतरात्मा सदैव चौकन्नी रहती है—वह तत्काल बोली—वत्स, समीक्षा के कुरुक्षेत्र में न कोई मातुल होता है न कोई मातुस्वषा। बस अपना यश ही सर्वोपरि होता है। तुम्हारे भीतर जो कूड़ा बहुत दिनों से संचित है, उसे थूक दो। इतने मर्मज्ञ फिर तुम्हें कहाँ मिलेंगे? यही सर्वोत्तम क्षण है। हिन्दी के छायावाद के प्राण प्रतिष्ठापक कहे जाने वाले और तुम्हारे चिर अशुभ चिंतक आचार्य नंददुलारे वाजपेयी ने 'हिन्दी साहित्य : बीसवीं शताब्दी' में कह रखा है—''नवीन युग की हिन्दी कविता की वृहत्त्रयी के रूप में जयशंकर प्रसाद, सूर्यकांत त्रिपाठी 'निराला' और श्री सुमित्रानंदन पंत की प्रतिष्ठा मानी जाती है।'' उन्होंने महादेवीजी के काव्य को छायावादी नागरिकता प्रदान करने से साफ इनकार कर दिया था। अब छायावादी के विक्टरी स्टेंड पर कौन-कौन खड़ा होगा और किस क्रम से, यह कौन तय करेगा? अंतरात्मा ने डुगडुगी बजाई और बताया कि तुम करोगे और कौन करेगा? तो छायावाद के विक्टरी स्टेंड से पंतजी को खिसकाने और छायावाद के प्राण प्रतिष्ठापक को उनकी असली हैसियत बताने का क्या उपाय है—पंतजी का एक तिहाई काव्य कूड़ा है—इसकी सार्वजनिक घोषणा।

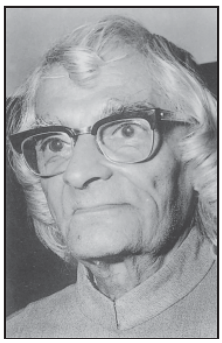

असल में नामवरजी यह भूल गए लगते हैं कि कूड़ा करकट सभ्यता और कला का भी अनिवार्य हिस्सा है। हम सबके घर से न जाने कितने कूड़ा करकट रोज ही निकलता है। गार्नियर की क्रीम लाओ तो पैकिंग वाला डिब्बा फेंक देना पड़ता है। नामवरजी दुकान से अपने लिए स्पंज वाली चप्पलें लाते होंगे तो उनका डिब्बा सहेजकर शायद ही रखते हों?

यदि पंतजी को छायावाद की वृहत्त्रयी से निष्कासित करना ही था तो नामवरजी बहस चलाते, विमर्श करते, वाद-विवाद, संवाद का सहारा लेते, आलोचक के मुख से कुछ कहते-कहलवाते यानी लोक अदालत का सहारा लेते। पर यह क्या एक झटके में पंतजी के तैंतीस प्रतिशत को कंडम कर दिया। जायसी ने इस प्रसंग की कल्पना कर ली थी और 'पद्मावत' में लिख दिया था 'न्याव न कियो कियो ठकुराई। हमरे भाग लिख दियो बुराई।'

अब हिन्दी समीक्षा का ठाकुर ठकुराई न करेगा तो क्या ठकुर सुहाती करेगा?

पर नहीं, हमको तो अपना इतिहास बनाना है। युग-युग जब यह कठोर कहानी चलेगी तो प्रश्न पूछा जाएगा, पंतजी को वनवास किसने दिलवाया—उत्तर मिलेगा नामवरजी ने। अब जब तक छायावाद रहेगा, नामवरजी का नाम रहेगा। टाइम कैप्सूल में उनका नाम सुरक्षित हो गया। नामवर जी, कोई कवि जीवन भर सदैव श्रेष्ठ कविताएँ नहीं लिखता—नहीं लिख सकता। पंतजी ने ही कूड़ा कविताएँ लिखी हों ऐसा नहीं है। और भी बहुतेरे कवि हैं जिनके खात में काफी कूड़ा करकट दर्ज है। बच्चन जैसे श्रेष्ठ गीतकार ने भी 'रेडियो सुनाता यह कैसा समाचार' जैसी मुर्दा कविताएँ लिखी हैं—एक दो नहीं, ढेरों। जब भवानी मिश्र ने आपातकाल का विरोध करने के लिए खम्भ गाड़कर प्रतिदिन तीन कविताएँ लिखने का कौल लिया तो 'त्रिकाल संध्या' की कविताएँ बयानबाजी बनने से नहीं बच पाईं। प्रसादजी की 'आँसू', 'लहर' और 'कामायनी' के कुछ अंशों को छोड़ दिया जाए तो वह भी कविता के आँगन में काफी घुटरुअन चलते हैं। तुलसी का महाकवित्व 'रामचरितमानस' और 'विनय पत्रिका' पर टिका है, 'रामलला नहछू' जैसी कृतियों पर नहीं। गालिब के 'धौल धप्पा उस सरापा नाज का शेवा नहीं' जैसे शेरों के लिए उर्दू समीक्षक उनकी बहुत खिंचाई करते हैं। यह केवल कविता के क्षेत्र में नहीं होता, अन्य कलाओं में भी होता है। खजुराहो के मन्दिरों के पास न जाने कितनी दरकी हुई, अनगढ़, अधूरी मूर्तियाँ दबी पड़ी हैं। कुतुबमीनार के पास रिजेक्ट किए हुए पत्थरों के ढेर लगे हैं। कला का कूड़ा। और तो और सत्यजीत राय जैसे अद्वितीय फिल्म निर्देशक की सभी फिल्में 'पाथेर पांचाली' नहीं बन पातीं। तो बड़के भैया, बिन कूड़ा के कलाओं की गति नहीं है। पंतजी ने बहुत लिखा है, अपने काव्य की भूमिकाएँ बदली हैं, समय का साथ देने के लिए सोच कर लिखा, बिना सोचे भी लिखा। पंतजी के काव्य का एक तिहाई वास्तव में अल्फैंजो आम के छिलके और गुठली की तरह है। नामवरजी बिहारी की 'अंगूरी सतसई' के मुरीद हैं। बिहारी ने केवल 713 दोहे ही नहीं लिखे होंगे, लिखे तो और भी होंगे पर कमजोर, असिद्ध, अधपके दोनों को दरबार में या बाजार में उतारने के पहले कूड़े के ढेर में फेंक दिया होगा। आप चाहें तो बिहारीलाल की इस बात के लिए तारीफ करें, चाहें तो उन्हें चतुर सुजान बाजारवादी कहकर उनका मखौल उड़ाएँ।

हिन्दी में इन दिनों आप जैसा वकील दूसरा

नहीं है। आप जिसका ब्रीफ हाथ में लेते हैं, उसका जितना पक्का और विरोधी के खिलाफ, बाप रे बाप, क्या-क्या दलीलें देते हैं कि बड़े-बड़े रामविलासों को पसीना आ जाए। आपचाहो तो मुजरिम को फाँसी के फन्दे से बचा लो, चाहो तो बेगुनाह को फन्दे पर झुला दो। अब यही देखिए न कि तब 'तार सप्तक' छपकर आया तो आप उससे बहुत खफा थे। वह आपकी प्रगतिशीली मानसिकता को पसन्द नहीं आया। त्रिलोचन जी से आपने कहा था—यह सब बकवास है, निरा कूड़ा। वह तो आपको त्रिलोचनजी ने समझाया और उनके साथ बैठकर आपने 'तार सप्तक' की कविताओं का पुनर्पाठ किया तो आपको लगा कि एक युगांतरकारी पुस्तक सामने आई है। बहुत कम लोगों को ही पता है कि नामवर सिंह कैरम खेलने के उस्ताद हैं। वे मारते कहीं हैं पर उनका लक्ष्य कहीं और होता है। पंतजी की कविताओं को कूड़ा कहना उनका अभिप्रेत नहीं था—कूड़ा कहने से उनकी अपनी चर्चा को जो गति मिलेगी, उन्हें जिस ऊर्जा की प्राप्ति होगी, उन्हें जो नामवरी हासिल होगी, वह उनके भावी ठहाकों का कारण होगी। महादेवीजी को पंत की तुलना में श्रेष्ठ सिद्ध कर नामवरजी बदलते हुए राजनीतिक परिदृश्य का भी साथ दे रहे हों तो कोई आश्चर्य नहीं। शायद वे इस तरह महिला सशक्ति अभियान में अपना योग रेखांकित कर रहे हों। आखिर मायावती की विजय का वे सीधे-सीधे गुणगान तो नहीं कर सकते न! विवेकजन्य लाचारी। पर जब हम महादेवीजी की शक्ति की घोषणा कर रहे हैं तो हे श्रोताओं, हे पाठकों, आप इसे मायावती की भी प्रशस्ति समझो और हमें इस बात का श्रेय दो कि हम राष्ट्रपति भवन में प्रतिभा पाटिल के प्रवेश की पगचापें पहले ही सुन चुके थे। हम जिसे कूड़ा कह रहे हैं, वह कूड़ा नहीं, ऊर्जा का अक्षय स्रोत है।

पुस्तकालयों, शिक्षा संस्थाओं

के लिए

साहित्यिक तथा विभिन्न विषयों की हिन्दी, अंग्रेजी, संस्कृत पुस्तकों का विशाल संग्रह

तीन हजार वर्ग फुट में विशाल शोरूम

विश्वविद्यालय प्रकाशन

विशालाक्षी भवन, चौक

(चौक पुलिस स्टेशन परिसर के पार्श्व में)

वाराणसी – 221 001 (उ०प्र०)

Phone & Fax : (0542) 2413741, 2413082

E-mail: sales@vvpbooks.com

संस्मरण : डॉ० त्रिभुवन सिंह

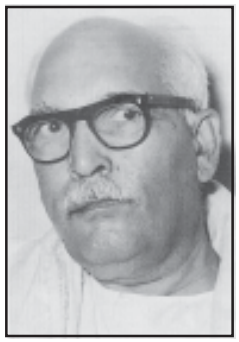

हर बड़ा आदमी बलिया में पैदा होता है

—हजारीप्रसाद द्विवेदी

आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदीजी मेरे दुर्गाकुण्ड आवास पर (मेरे पिताजी प्रो० त्रिभुवन सिंह, पूर्व कुलपति महात्मा गाँधी काशी विद्यापीठ एवं पूर्व अध्यक्ष हिन्दी विभाग, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय) सप्ताह में दो-तीन दिन प्रात: वे अपने रविन्द्रपुरी स्थित आवास से भ्रमण करने निकलते थे तो अवश्य आते थे। मेरे गाँव में उनके पिता पं० अनमोल द्विवेदी 6 माह रहे और मेरे पितामह स्व० राजाराम सिंह को उन्होंने गुरु मंत्र भी दिया था। आचार्य द्विवेदीजी से सम्बन्धित संस्मरण का उल्लेख पिताजी अक्सर करते थे।

आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी विनम्रता की मूर्ति थे। वे जितने ही विनम्र उतने ही स्वाभिमानी भी। सहज सरल स्वभाव में वे कभी-कभी ऐसा विनोद करते थे जिसे सरलता से समझना कठिन होता था। उनके विनोद सदा उपदेशपरक और दायित्वपूर्ण हुआ करते थे, जिन्हें तत्काल समझना कठिन होता था बाद में समझने के बाद स्पष्ट होता था कि वे अपने व्यक्तित्व को किस प्रकार प्रस्तुत कर रहे हैं। घटना उस समय की है जब पिताजी की शोध छात्रा लालमुनी देवी के बाह्य परीक्षक आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी थे। चण्डीगढ़ से आने के बाद वे बाह्य परीक्षक नहीं रह पाते। अत: पिताजी को ही शोध छात्रा के साथ चण्डीगढ़ जाना पड़ा। साथ में प्रो० चौथीराम यादव (पूर्व प्रोफेसर एवं अध्यक्ष हिन्दी विभाग, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी) भी थे। इसलिए भी उन्हें चण्डीगढ़ भेज रहे थे ताकि वे द्विवेदीजी को काशी आने के लिए मानसिक दृष्टि से तैयार करें। यहाँ उन्हीं के वरिष्ठ लोग ऐसा वातावरण तैयार कर रहे थे कि वे न लौटें, क्योंकि उनके आने के बाद उनका वर्चस्व कुलपति पर नहीं रह पायेगा। उस समय कुलपति डॉ० अमरचन्द्र जोशी थे जो चण्डीगढ़ में कुलपति रह चुके थे। उनके मन में आचार्य द्विवेदी के प्रति बड़ा सम्मान था। मौखिकी हेतु निश्चित तिथि से एक दिन पूर्व ही वे चण्डीगढ़ पहुँच गए और दूसरे दिन आचार्यजी के आवास पर ही मौखिकी के लिए स्थान निर्धारित हुआ। वे लोग समय से आचार्यजी के आवास पर पहुँचे। पण्डितजी चाय पर उन लोगों की प्रतीक्षा कर रहे थे। वे सहज भाव से बैठे थे। चाय पी लेने के बाद पिताजी ने मौखिकी के लिए अनुरोध किया। द्विवेदीजी ने अट्टहास किया और कहा—''भाई जरा बैठो, मैं परीक्षक तो बन जाऊँ।'' पिताजी ने इसका तात्पर्य नहीं समझा। थोड़ी देर बाद ही आचार्य जी अपनी पूर्ण वेशभूषा के साथ उपस्थित हुए और अत्यन्त गम्भीर भाव से परीक्षक का अभिनय करते हुए उन लोगों के सामने बैठ गए। मौखिकी सम्पन्न हुई और शोध छात्रा को आचार्यजी ने आशीर्वाद दिया और पिताजी से पण्डितजी ने कहा कि मैंने भी एक शोध किया है। पिताजी ने पूछा कि ''कौन-सा शोध पण्डितजी?'' यही कि कालिदास बलिया में पैदा हुए थे।'' बाबूजी चकित कहाँ कालिदास और कहाँ बलिया। पूछा—पण्डितजी इसका आधार क्या है? पण्डितजी ने कहा—''आधार मेरा मन कहता है दूसरे के लिए क्यों नहीं मेरा मन कहता और सबसे बड़ा आधार तो यह है कि सबसे बड़ा आदमी बलिया में ही पैदा होता है। कालिदास कवि गुरु थे। अत: उन्हें बलिया में पैदा होना ही है और वे गम्भीर हो गए।'' उस समय तो बात उनके समझ में नहीं आई। थोड़ी देर बाद उन्होंने समझा कि द्विवेदीजी ने परीक्षक के दायित्व और शोध की मर्यादा पर टिप्पणी की है। यह कितनी बड़ी टिप्पणी थी इससे द्विवेदीजी के स्वाभिमान का अनुमान होता है। **—प्रो० विजयबहादुर सिंह**

काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी

मधुर वाणी कल्याणी

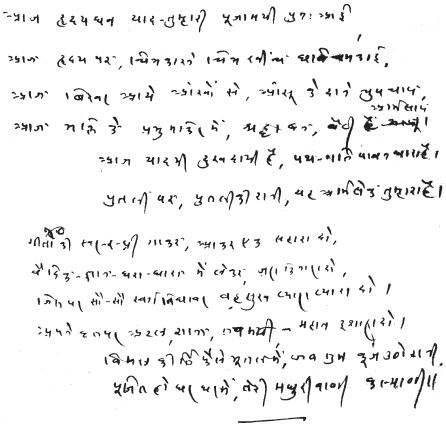

हृदयधन

—माखनलाल चतुर्वेदी

जन्मदिवस 9 सितम्बर 1850 की स्मृति में

भारतेन्दु हरिश्चन्द्र की प्रथम जयन्ती

बीसवीं शताब्दी के प्रारम्भिक वर्षों में जब साहित्यिक चेतना बहुत नहीं थी, किसी साहित्यकार की जन्मतिथि को स्मरण करना और उसकी जयन्ती मनाना कल्पनातीत थी। तभी राय कृष्णदासजी को भारतेन्दु जयन्ती मनाने का प्रस्ताव मिला। भारतेन्दुजी की जन्मतिथि ऋषि पंचमी 9 सितम्बर 1850 थी। ऋषि पंचमी भी दूर नहीं थी।

कारयित्रा प्रतिभा के धनी 18 वर्षीय राय कृष्णदासजी को यह सूझ हिन्दी के मिशनरी सेवक पं० केदारनाथ पाठक से मिली। पाठकजी नागरी प्रचारिणी सभा के पुस्तकालय का दायित्व सँभालते थे। पाठकजी जीवन्त विश्वकोश थे। राय साहब का प्रसादजी से परिचय उन्होंने ही कराया था।

प्रसादजी और ब्रजचन्द्रजी (भारतेन्दुजी के भतीजे) को यह प्रस्ताव बहुत भाया और उसे सफलीभूत करने में सक्रिय हुए। कुछ रूढ़िवादियों को यह योजना पसन्द नहीं आयी और बाधा ही उत्पन्न करते रहे। किन्तु उससे हतोत्साहित न होकर राय साहब ने 31 अगस्त 1911 को नागरी प्रचारिणी सभा भवन में भारतेन्दु जयन्ती मनाने का निश्चय किया। प्रसादजी और राय साहब की युगल जोड़ी भारतेन्दु जयन्ती का संकल्प चरितार्थ करने में लग गयी।

भारतेन्दु का तैलचित्र प्राप्त कर विविध रंग और सुगन्ध वाले फूलों, जिसमें स्थान-स्थान पर सुन्दर पत्तियाँ भी थीं, एक सुन्दर चौखटा बनाकर सजाया गया। ऊपर श्वेत पुष्पों का चन्द्रमा जिसके भीतर रक्ताक्षरों में 'श्री हरि' बना था। जयन्ती समारोह के सभापति थे महामहोपाध्याय पं० अयोध्यानाथ। वे फलित ज्योतिष सम्राट थे, अत्यन्त सहृदय। ईश्वरगंगी मुहल्ले के निवासी अयोध्यानाथजी की ख्याति दूर-दूर तक थी। प्रथम महायुद्ध में जोधपुर नरैह को फ्रान्स के युद्ध भूमि में जाने का निर्देश हुआ। पं० अयोध्यानाथजी से प्रस्थान का मुहूर्त पूछा गया। इस मुहूर्त का प्रतिफल था कि महाराजा जोधपुर युद्धभूमि में दुर्घटना से बाल-बाल बच गये। पं० अयोध्यानाथजी के पौत्र श्री कुशलनाथ शर्मा ईश्वरगंगी के प्रतिष्ठित वैद्य हैं। 'अवधेश' उपनाम से वे ब्रजभाषा में कविता करते और मधुरतापूर्ण स्वरों में हारमोनियम बजाते और सुनाते, वे भारतेन्दुजी के प्रशंसक ही नहीं उनके भक्त भी थे। उनके छन्दों में भारतेन्दुजी की झलक रहती थी। वे उर्दू में भी कविता करते थे और समस्यापूर्ति के लिए विख्यात थे।

समय से पूर्व सभा का हाल दर्शकों से भर गया। भारतेन्दु जयन्ती समारोह भारतेन्दु नाटक मण्डली के मांगलिक गायन से आरम्भ हुआ। मांगलिक गायन के बाद कविता पाठ का सिलसिला शुरू हुआ। राष्ट्रकवि मैथिलीशरण गुप्त दो सप्ताह पूर्व काशी पधारे थे, इस अवसर के लिए वे 'श्री हरिश्चन्द्र पंचक' नामक कविता दे गये थे। श्री राय कृष्णदासजी ने वह कविता सुनाई। आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने भी कविता पढ़ी।

अब बारी प्रसादजी की थी, इक्कीस वर्षीय प्रसादजी खड़े हुए, देखते ही बनती थी। खस के इत्र से तर ढाके की बारीक जामदानी के अंगरखे के नीचे से झलकती हुई हरी मिर्जयी, सिर पर महीन चुनी हुई अदावाली दुपलिया टोपी, पाँव में चूड़ीदार पायजामा, हाथ में उनकी चिरसंगिनी बाँस की बारहसिंहें के मूठवाली सुन्दर छड़ी। लोग कह उठे 'एहिं बानक मों मन बसौ सदा जयशंकर प्रसाद'।

प्रसादजी की भारतेन्दु के प्रति अगाध श्रद्धा थी। वे उन्हें अपना आदर्श मानते थे। उन्होंने ब्रजभाषा में यह कविता सुनाई—

सज्जन चकार भए प्रफुल्लित मानि मन में मोद को।
सहृदय हृदय शुचि कुमुद
विकसे विशद बन्धु विनोद को॥
छिटकी सुहिन्दी चन्द्रिका,
आनन्द अतिहिं विधायिनी।
यह भारतेन्दु भयो उदय,
घरि कान्ति जो सुखदायिनी॥
जो सूर के शुचि किरन में, मार पयोनिधि नीर में।
शुभ नाम हिन्दी की चली, यह सहज ही कछु तीर में॥
सो अन्धकार निहारि ठिठकी, भूमि भँवर के मीर ते।
यह भारतेन्दु प्रकाशि के, पथ दियो ताहि समीर ते॥
प्रच्छन्न मारक कंटकौ ते, रैन अँधियारी घनी।
कहुँ कहुँ चपला जोति होति न चाँदनी ऐसी तनी॥
घटमार हू मग माँहि, हिन्दी को पथिक जाये कहाँ।
हरिचन्द ने दिनरात में यकत्यो प्रकाश कियो तहाँ॥
अभिमान के अब गरल में सब कण्ठ लो पूरित रहे।
कवि वचन विमला सुचा के तव धार पै सब ही बहै॥
नक्षत्र जुगनू की चमक ते चाहते शोभा भली।
यह भारतेन्दु कियो प्रकाश भई उदित चन्द्रावली॥
उर्दू सुतीछन किरन में कुम्हिलाई चाहि कराहती।
नक्षत्र दर्शन से सुकछु आराम पायो है रती॥
हिन्दी रजनिगन्धा सुलखि के भारतेन्दु अमन्द सों।
भई आप धीश प्रसन्न कर में तालिता आनन्द सों॥
भादौ यही पे पक्ष कृष्ण सुचन्द्र प्रकटे आदि में।
यह शुक्ल यश ही में भये पै रंग एक अनादि में॥
वह अष्टमी को इन्दु औ यही सप्तमी के मोद में।
यह भक्त थे भगवान के सामीप्य शुद्ध विनोद में॥
यह धन्य है दिन आजु को हिन्दी वदन को विन्दु है।
जेहि में प्रकट सुन्दर भए यह धन्य भारत इन्दु है॥
हरिचन्द्र की मंजुल कला प्रकटी लखो सुखमा-भई।
हिन्दी विजयिनी के विजय की वैजयन्ति उड़ा दई॥

ऐसे समाज में प्रसादजी का कविता पढ़ने का यह पहला अवसर था। भारतेन्दुजी उनके आदर्श थे। यह हार्दिकतापूर्ण ब्रजभाषा की प्रतिनिधि रचना थी। बीसवीं शताब्दी में आयोजित भारतेन्दुजी की प्रथम जयन्ती अत्यन्त सफल रही। समारोह में अनेक साहित्यकार सम्मिलित हुए जिनमें प्रमुख थे—कालीप्रसन्न चटर्जी, पूर्व सम्पादक ट्रिब्यून, जैनमुनि विद्या विजय, प्रो० जे०एन० उनवाला, पं० रघुनाथ शर्मा, गंगाप्रसाद गुप्त, पं० किशोरीलाल गोस्वामी, पं० लक्ष्मीनारायण त्रिपाठी, सम्पादक 'भारतजीवन', श्री श्यामसुन्दरदास, पं० श्याम बिहारी मिश्र, पं० श्रीधर पाठक, पं० जगन्नाथप्रसाद शुक्ल, श्री पुरुषोत्तमदास टण्डन के शुभकामना सन्देश पढ़े गये और इस प्रकार काशी में साहित्यकार जयन्ती मनाने की परम्परा शुरू हुई। बाद में नागरी प्रचारिणी सभा में ऐसे अनेक आयोजन हुए और होते जा रहे हैं।

अब तो बात फैल गई

कान्तिकुमार जैन

संस्करण : 2007

ISBN :
978-81-7124-586-4

विश्वविद्यालय प्रकाशन,
वाराणसी

मूल्य : 250.00

ऐसा है पूर्वाञ्चल विश्वविद्यालय

जौनपुर उत्तर प्रदेश में वीर बहादुर पूर्वाञ्चल विश्वविद्यालय है जहाँ स्नातक प्रथम वर्ष हिन्दी की परीक्षा में छात्रों ने अपने ही नहीं अपने हिन्दी अध्यापकों के ज्ञान का भी परिचय दे दिया जो स्वयं कुंजी गाइडों के सहारे पढ़ाते हैं। उनकी पाठ्य-पुस्तकें भी कुंजी गाइड सम्पन्न है।

कवि उनके लिए कवी है, पंत पंथ है, मीरा नृत्यांगना है। सूरदास सुरदास हैं, तुलसीदास भी शुद्ध नहीं लिख सकते तो वर्तनी के सही होने का प्रश्न ही नहीं। पूर्वाञ्चल के महाविद्यालयों की पाठ्य-पुस्तकें, आज पाठ्य समिति के सदस्यों के धनोपार्जन का माध्यम बनी हुई हैं उनकी समीक्षा कराई जाती और उनके अध्यापकीय ज्ञान की जाँच कराई जाती तो वस्तुस्थिति का ज्ञान होता। इस विश्वविद्यालय से सम्बद्ध लगाग 480 महाविद्यालय हैं, अधिकांश स्ववित्तपोषी हैं, जहाँ छात्रों को परीक्षा की वैतरणी पार कराने की गारण्टी दी जाती है। राजनीति में पराजित और विजयी दोनों के लिए महाविद्यालय स्थापित करना पुरानी जमींदारी के दिनों को साक्षात कराता है।

काशी हिन्दू विश्वविद्यालय
हिन्दी का गुरुकुल

—डॉ० अवधेश प्रधान

सुप्रसिद्ध आलोचक डॉ० रामस्वरूप चतुर्वेदी काशी हिन्दू विश्वविद्यालय हिन्दी विभाग को हिन्दी आलोचना का गुरुकुल कहते थे। आखिर हिन्दी आलोचना के हिमालय आचार्य रामचन्द्र शुक्ल इसी पीठ पर विराजमान थे। उनके सुयोग्य शिष्य और छायावाद आन्दोलन के सेनापति-समालोचक नंददुलारे वाजपेयी भी तो यहीं थे। फिर आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी ने दस वर्षों तक रहकर इसे साहित्य का शक्तिपीठ बना दिया। रीतिकाव्य के अन्यतम विद्वान् और भाष्य-टीका परम्परा के आधुनिक आचार्य पं० विश्वनाथप्रसाद मिश्र ने अध्ययन-अनुसंधान और अध्यापन का कीर्तिमान यहीं स्थापित किया। रामविलास शर्मा के बाद अग्रगण्य समीक्षक डॉ० नामवर सिंह ने इन्हीं आचार्यों के चरणों में बैठकर शिक्षा ग्रहण की और कुछ दिन तक अध्यापन भी किया। एक डॉ० रामविलास शर्मा को छोड़ दें तो हिन्दी आलोचना के बाकी सभी शिखर पुरुषों का नाम इस पीठ से जुड़ा है।

जब हिन्दी को उच्चस्तरीय अध्ययन-अध्यापन का विषय नहीं माना जाता था तब महामना मदनमोहन मालवीय ने काशी हिन्दू विश्वविद्यालय में 1920 में इसका सूत्रपात किया और भाष्य-टीका परम्परा के उद्‌भट विद्वान् लाला भगवानदीन के हाथों में इसकी बागडोर सौंपी। फिर लखनऊ में कार्यरत बाबू श्यामसुन्दरदास को लाया गया और उनके कुशल मार्गदर्शन में 1924 से 1937 तक हिन्दी विभाग ने लम्बे डग भरे। उन्होंने नागरी प्रचारिणी सभा में कार्यरत आचार्य शुक्ल को हिन्दी विभाग में लाकर हिन्दी का, हिन्दी विभाग का और हिन्दी आलोचना का बड़ा भारी उपकार किया। आचार्य केशवप्रसाद मिश्र—जो यहाँ 1942 से 1949 तक अध्यक्ष रहे—लेखक-आलोचक के रूप में कम लेकिन सर्वोत्कृष्ट अध्यापक के रूप में प्रथम गणनीय रहे। संत साहित्य के अद्वितीय अनुसंधाता डॉ० पीताम्बरदत्त बड़थ्वाल शुक्लजी के यहाँ नियुक्त हो जाने से अध्यक्ष होते-होते रह गए और निराश होकर लखनऊ चले गए। काव्यशास्त्र और भाषा-विज्ञान के आचार्य भोलाशंकर व्यास और आधुनिक समीक्षा के साधक डॉ० बच्चन सिंह, भारतेन्दुयुगीन साहित्य के विश्वकोश विजयशंकर मल्ल और कबीर साहित्य के खोजी पण्डित शुकदेव सिंह ने भी इस विभाग की धवल कीर्ति का विस्तार किया। नई कहानी आन्दोलन के दौर में भी ग्रामकथा की पताका को ऊँचे उठाए हुए डॉ० शिवप्रसाद सिंह ने इसी विभाग में रहकर कहानी-उपन्यास, ललित निबन्ध और दार्शनिक-वैचारिक लेखन की साधना की। उनके बाद डॉ० काशीनाथ सिंह ने भी इस विभाग की साहित्य-परम्परा को जीवंत बनाए रखा और अपनी रचनाओं से अपना और इस विभाग का नाम ऊँचा किया। विश्वविद्यालयों में हिन्दी के मानक पाठ्यक्रम का सिलसिला यहीं शुरू हुआ। यहीं की कक्षाओं में पढ़ाने के लिए शुक्लजी ने जो नोट्स तैयार किए उन्हीं का व्यवस्थित रूप 'हिन्दी साहित्य का इतिहास' के रूप में 1929 में प्रकाशित हुआ। आलोचना ही नहीं, साहित्य की अनेक विधाओं को इस विभाग से प्रकाश और प्रेरणा मिलती रही है। यह आलोचना का ही नहीं, समूची हिन्दी का गुरुकुल है। इसकी उज्ज्वल परम्पराओं को आगे बढ़ाने की जिम्मेदारी नई पीढ़ी के विद्वानों को महसूस करनी चाहिए।

बनारस से हिन्दी अध्ययन की शुरुआत

1929 ई० में जब हिन्दी शब्द सागर पूर्ण हुआ और उसकी परिशिष्ट के रूप में शुक्लजी का लिखा हुआ 'हिन्दी साहित्य का इतिहास' प्रकाशित हुआ तो अनेक मनीषी विद्वान् हिन्दी के स्वर्ण भविष्य की कल्पना में मग्न हो गये। श्यामसुन्दरदास के 'भाषा विज्ञान' तथा 'साहित्यालोचन' सामने आ चुके थे। लाला भगवानदीन, मल्लिनाथ जैसी टीकायें प्रकाशित करने लगे। 'हरिऔध'जी 'प्रियप्रवास' लिखकर संस्कृतनिष्ठ खड़ी बोली के प्रभात में उसके मध्याह्न की सूचना कई वर्ष पूर्व ही दे चुके थे। बनारस ने वस्तुत: हिन्दी को समृद्ध एवं सरस बनाने की प्रक्रिया का जो श्रीगणेश किया था, वह मंगलमयी विभूतियों का सम्पर्क पाकर परिपक्वावस्था को प्राप्त करने लगा। बनारस का यह निर्माण कार्य अत्यन्त महत्त्वपूर्ण था।

—डॉ० मुंशीराम शर्मा 'सोम'

पुस्तकें

तलाश रही
पुस्तकें, चले गए
कहाँ पाठक ?
आलमारी में
बेचैन हैं पुस्तकें
बिना पाठक।
आओ पाठक
पुस्तकालय के हैं
खुले फाटक!
ताक रहे हैं
प्रेमचंद निराला
तो एक टक

—नलिनीकान्त, अंडाल, प०बंगाल

स्मृति-शेष

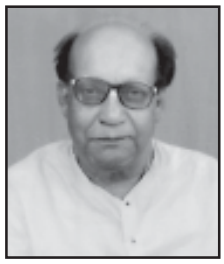

डॉ० शुकदेव सिंह
भये कबीर कबीर

संत साहित्य मर्मज्ञ **डॉ० शुकदेव सिंह** शुक्रवार, 21 अक्टूबर 2007 को अपराह्न 3.15 बजे कबीर लोक में प्रस्थान कर गये। 73 वर्षीय शुकदेवजी उच्च रक्तचाप, हृदय रोग, मधुमेह ऐसी बीमारियों से ग्रस्त रहते हुए हमेशा सक्रिय रहते थे। उस दिन भोजन करते समय अन्न के फँस जाने से श्वाँस नली अवरुद्ध हो गई, जो उनकी मृत्यु का कारण बना। उनके निधन का समाचार संतों, साहित्यकारों तथा जनसामान्य सभी को मर्माहत कर गया। सबेरे उन्होंने अपनी पुस्तक 'भोजपुरी और हिन्दी' का प्रूफ भेजा था। इस तरह वे अचानक चले जायँगे, किसी को कल्पना भी नहीं थी। हर दूसरे-तीसरे फोन पर सम्पर्क करते थे, प्रात: सहसा मेरे निवास पर आ जाते थे। अब न फोन आयेगा, न वे आयेंगे। यह सोचकर व्यथित हूँ।

शुकदेव सिंह का जन्म 24 जुलाई 1934 को गाजीपुर जनपद के जीवपुर गाँव में हुआ। उच्च शिक्षा काशी हिन्दू विश्वविद्यालय में हुई। महाराजा कालेज, आरा (बिहार) से अध्यापन शुरू किया। काशी हिन्दू विश्वविद्यालय में 1967 में हिन्दी विभाग में नियुक्त हुए, 1995 में प्रोफेसर पद से अवकाश ग्रहण किया।

संत साहित्य मर्मज्ञ कबीर, रैदास, रामानंद की रचनाओं के व्याख्याता ही नहीं, उनके स्मृति स्थलों के संरक्षक भी थे। हिन्दी में लगभग 21 पुस्तकों के अलावा अंग्रेजी और इटालियन में भी पुस्तकें लिखीं। कितने विदेशी साहित्यकार तथा अध्येता उनके शिष्य थे। उन्होंने अमेरिका, ब्रिटेन, जर्मनी, इटली, बेल्जियम व जापान जैसे देशों तक संत साहित्य का संदेश पहुँचाया।

शनिवार 22 सितम्बर को हरिश्चन्द्र घाट पर उनका पार्थिक शरीर पंचतत्व में विलीन हुआ। निधन का समाचार मिलने पर उनके निवास तथा घाट व शव यात्रा में डॉ० बच्चन सिंह, डॉ० काशीनाथ सिंह, प्रो० चौथीराम यादव, डॉ० अवधेश प्रधान, प्रो० बलराज पाण्डेय, प्रो० वंशीधर त्रिपाठी, डॉ० वाचस्पति आदि अनेक साहित्यकार सम्मिलित हुए। सभी मर्माहत थे—यह क्या हो गया ?

समस्त शारीरिक व्याधियों को दर किनार करते हुए शुकदेवजी विभिन्न साहित्यिक समारोह में उपस्थित ही नहीं होते, दो टूक बात कहने से नहीं चूकते थे। कबीर की बानी बोलनेवाले शुकदेव का अभाव निरन्तर खटकता रहेगा। शुकदेवजी के प्रति विनम्र श्रद्धांजलि अर्पित करते हुए कलम काँप रही है, उनकी स्मृति वर्षों तक बनी रहेगी।

—पु०दा० मोदी

चिन्तनीय भाषा-प्रयोग

—डॉ० बदरीनाथ कपूर

ऐसे भाषा-प्रयोग प्राय: देखने में आते हैं जिनमें खटक होती है अथवा जिनमें छोटा-मोटा सुधार करने भर से चार चाँद लग जाते हैं। विज्ञान और प्रौद्योगिकी के वर्तमान युग में जब हर छोटी-बड़ी वस्तु को भी सुगठित, परिपूर्ण तथा पैना बनाने का प्रयास किया जाता हो तब भाषा के प्रति तो हमें अति सचेत रहना और भी आवश्यक है क्योंकि यही हमारे भावों को हजारों-लाखों लोगों तक पहुँचाने और दूसरों के भावों को समझने का एकमात्र माध्यम है। इस माध्यम की उपयोगिता तथा उत्तमता इसके उपयुक्त तथा सर्वमान्य प्रयोगों पर आधारित है। अत: आवश्यक है कि हम अनुपयुक्त, शिथिल तथा मनमाने प्रयोगों से बचें। आहरा हम कुछ खटकनेवाले वाक्यों पर दृष्टिपात करें। सभी उदाहरण प्रतिष्ठित समाचार-पत्रों तथा मान्य लेखकों की रचनाओं से लिए गए हैं।

अगर आप कोई प्रयास नहीं कर रहे हैं तो आपके युद्ध-विरुद्ध होने का कोई अर्थ नहीं।

'युद्ध-विरुद्ध होना' और 'युद्ध-विरोधी होना' दोनों भाषा-प्रयोगों में अन्तर है। 'विरोधी' विशेषण है और आशय है विरोध करनेवाला। 'युद्ध-विरोधी' का अर्थ हुआ—युद्ध का विरोध करने वाला। इसका संज्ञावत् प्रयोग युद्ध का विरोध करनेवाले व्यक्ति के लिए भी होता है; जैसे—बुश को अपने ही देश में युद्ध-विरोधियों का भी सामना करना पड़ रहा है। यदि पूर्वोक्त वाक्य में 'युद्ध-विरुद्ध' के स्थान पर 'युद्ध-विरोधी' होता तो वाक्यार्थ सहजता से समझ में आ जाता।

'विरुद्ध' वस्तुत: विशेषण है ही नहीं। इसका प्रयोग सदा 'के विरुद्ध' रूप में होता है। अत: यह के आगे, के सामने, के पहले, के पीछे आदि की तरह सम्बन्धबोधक है और इसका प्रयोग क्रिया विशेषण के रूप में होता है। 'युद्ध-विरुद्ध' का वास्तविक रूप है—युद्ध के विरुद्ध। 'के विरुद्ध' से आशय है—के विरोध में और 'युद्ध-विरुद्ध' का आशय हुआ—युद्ध के विरोध में; जैसे—(क) पूरा विपक्ष सन्धि-विरुद्ध है (अर्थात् पूरा पक्ष सन्धि के विरोध में है)। (ख) बेटा बाप के विरुद्ध चुनाव लड़ रहा है (अर्थात् बेटा बाप के विरोध में चुनाव लड़ रहा है)। ध्यान रहे कि जो विरोध में होता है वह सामने उपस्थित होता है और विरोधी दूर बैठा शब्दबाण भी चला सकता है।

कोई प्रशंसा करे और आप प्रसन्न हों तो आपके पुण्य का क्षय होगा तथा कोई आलोचना करे और आप क्रोध में आ जाएँ तो आपका पाप पुष्ट होगा।

उक्त बृहत् वाक्य छह उपवाक्यों का समुच्चय है जिसमें तीन-तीन उपवाक्यों की दो इकाईयाँ हैं। वाक्य में कोई दोष नहीं वरन् वाक्य की दोनों इकाईयों के क्रमश: प्रथम, द्वितीय तथा तृतीय उपवाक्यों के एक-समान तथा नपे-तुले घटकों का प्रयोग आकर्षक और सुखद प्रतीत होता है। 'क्रोध में आ जाना' और 'क्रुद्ध होना' में सम्भवत: अर्थ की दृष्टि से अन्तर नहीं। परन्तु इनके परिवर्तन से वाक्य का स्वरूप और भी खिल उठता है, जैसे—

कोई प्रशंसा करे और आप प्रसन्न हों तो आपके पुण्य का क्षय होगा तथा कोई आलोचना (निन्दा?) करे और आप क्रुद्ध हों तो आपका पाप पुष्ट होगा।

अब दोनों इकाईयों की संगति देखें—

कोई प्रशंसा करे—कोई आलोचना करे।

आप प्रसन्न हों—आप क्रुद्ध हों।

आपके पुण्य का क्षय होगा—आपका पाप पुष्ट होगा। दूसरी इकाई के तीसरे उपवाक्य 'आपका पाप पुष्ट होगा' की जगह 'आपके पाप का पोषण होगा' कहीं अधिक संगत तो नहीं? वैसे आप चाहें तो 'आपके पुण्य का क्षय होगा' की जगह 'आपका पुण्य क्षीण होगा' भी रख सकते हैं।

आपका पत्र

'पाँच पाण्डवों की द्रौपदी' को मैंने कई बार पढ़ा। एक लेखक के नाते मैं आप प्रकाशक को आने वाली संशोधन, प्रूफ रीडिंग सहित सभी कठिनाइयों के दौरान स्वयं अपनी सेवाएँ दूँगा। कृति की सर्जना लेखन के दौरान लेखक माँ होता है, कृति गर्भ में होती है। वह प्रसव पीड़ा और प्रसव आनंद दोनों से गुजरता है। कृति प्रकाशक के हाथ पहुँचने के बाद माँ अपने कर्त्तव्य से मुक्त नहीं होती। ऐसा अंग्रेजी माताएँ/मैडम ही करती हैं। प्रकाशक धाय कर्म करता है तो भी माता का सहयोग केन्द्रीय भूमिका में रहता है। छपने के बाद माँ प्रसन्न होती है, धाय भी। यों मैं प्रकाशक को पिता और लेखक को माँ मानता हूँ। पुस्तक दोनों का सृजन कर्म है। दोनों का योग संयोग ही पुस्तक-पुत्र को यशस्वी बनाता है।

—हृदयनारायण दीक्षित, लखनऊ

पत्रिका नहीं सेतु है जो साहित्यकारों को जोड़ने एवं एक-दूसरे को समझने में अहम् भूमिका निभा रही है। **—यदुनाथ सेउटा,** कोलकाता

'भारतीय वाङ्मय' का अगस्त 2007 अंक देखने को मिला। भरपूर साहित्यिक सामग्री। मुखपृष्ठ पर यश मालवीय की कविता 'किताबों की दुनिया' एवं 'आठवाँ विश्व हिन्दी सम्मेलन' पर रपट पढ़ी, अच्छी लगी। श्री पुरुषोत्तमदास मोदी के आलेख 'पाँच पाण्डवों की द्रौपदी' क्या ही सटीक एवं सुन्दर उपमा है। आलेख मन को छूने वाला है। मोदीजी ने ही प्रख्यात साहित्यकार जयशंकर प्रसाद द्वारा 'भूमिका की उपेक्षा क्यों?' सोदाहरण प्रस्तुत किया है। श्री कांतिकुमार जैन ने 'निराला द्वारा मायावती की जीत की भविष्यवाणी 75 वर्ष पूर्व' शीर्षक ही पाठक को पढ़ने के लिए विवश कर देता है।

पुस्तक परिचय एवं समीक्षा, साहित्यिक समाचार एवं अन्य रोचक जानकारियाँ इस लघु पत्रिका के आकर्षण को द्विगुणित कर देते हैं।

—शिशुपाल सिंह, नारसरा, राजस्थान

आपने सम्पादकीय में प्रेमचंद स्मारक के सम्बन्ध में अत्यन्त महत्त्वपूर्ण प्रश्न उठाए हैं। परन्तु आज की स्वार्थपूर्ण राजनीति में सरकार किसी साहित्यकार के स्मारक की चिन्ता कैसे कर सकती है? विशाल भारत में अक्टूबर 36 के अंक में पं० बनारसीदास चतुर्वेदी ने भी प्रेमचंद स्मारक पर लिखते हुए उसकी रूपरेखा भी प्रस्तुत की थी। उसे अवश्य देख लेना चाहिए और फिर साहित्यकारों को ही कोई सार्थक प्रयत्न करना चाहिए, सरकार का मुँह क्यों ताकें? हाँ, प्रेमचंद स्मारक में उनकी रचनाओं के प्रथम प्रकाशन तथा पुस्तकों के प्रथम संस्करण अवश्य ही सुरक्षित किए जाने चाहिए, चाहे मूल हों, चाहे फोटोकॉपी, चाहे माइक्रोफिल्म।

एल. उमाशंकर सिंह ने कलामे रब्बानी का विस्तृत जानकारी देकर ज्ञानवृद्धि की है। उनका आलेख पढ़कर इस पुस्तक के प्रति जिज्ञासा उत्पन्न हुई है। **—डॉ० प्रदीप जैन,** मुजफ्फरनगर

'भारतीय वाङ्मय' का नामकरण मुझे अत्यन्त भाया। नाम के अनुरूप यदि आप भारत की अन्य भाषाओं तथा साहित्यों की गतिविधियों की सूचना, टिप्पणी और समीक्षाएँ प्रकाशित कर सकें तो सही मायने में यह पत्र भारतीय भाषाओं का प्रतिनिधि माना जा सकता है।

कुल मिलाकर आप इस बुलेटिन को केवल पुस्तक सूची तथा विज्ञापन तक सीमित न रखकर हिन्दी जगत की हलचलों तथा सूचना देकर पाठक जगत का उपकार कर रहे हैं।

—डॉ० बालशौरि रेड्डी, चेन्नई

नामालूम रिश्तों का दंश

(कहानी-संग्रह)

नीहारिका

संस्करण : 2007

ISBN : 978-81-89498-08-5

अनुराग प्रकाशन, वाराणसी

मूल्य : 120.00

दक्षिण में हिन्दी की स्थिति

डॉ० टी० मोहन सिंह

हिन्दी साहित्य अकादमी, हैदराबाद के अध्यक्ष एवं त्रैमासिकी 'संकल्य' के प्रधान सम्पादक डॉ० टी० मोहन सिंह (पूर्व हिन्दी विभागाध्यक्ष, उस्मानिया विश्वविद्यालय और दक्षिण भारत में हिन्दी प्रचार सभा के प्रमुख स्तम्भ) विगत 17 जून को गाजीपुर जनपद में आये। 4 दिनों तक डॉ० विवेकी राय के अतिथि रहे। इसी बीच डॉ० प्रमोदकुमार अनंग ने डॉ० टी० मोहन सिंह का साक्षात्कार लिया। उसके कुछ प्रमुख अंश—

प्रश्न : गैर हिन्दीभाषी होते हुए भी हिन्दी के प्रति झुकाव या प्रेरणा कहाँ से और कैसे मिली ?

उत्तर : जब मैंने अपने गाँव से 10 किलोमीटर की दूरी पर स्थित कल्वाकुर्ती हाईस्कूल में भर्ती हुआ तब पूज्य श्री बुच्चय्याजी वहाँ हिन्दी के अध्यापक थे। वे हिन्दी और संस्कृत की परीक्षाओं का केन्द्र भी चलाया करते थे। उन्हीं की प्रेरणा से मैंने हिन्दी प्रचार सभा की प्रथमा, मध्यमा, उत्तमा, विशारद, भूषण एवं विद्वान् की परीक्षाएँ उत्तीर्ण की और बाद में पी०यू०सी०, बी०ए० एवं एम०ए० में हिन्दी को पढ़ा। यह सब महात्मा गाँधीजी द्वारा प्रेरित राष्ट्रभाषा प्रचार आन्दोलन के कारण ही सम्भव हुआ।

प्रश्न : गैर हिन्दीभाषियों के बीच किन-किन अवरोधों का सामना करना पड़ा ?

उत्तर : आन्ध्र प्रदेश में हिन्दी के लिए अनुकूल वातावरण है। हिन्दी प्रचार सभा, हैदराबाद, दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार सभा, मद्रास की आन्ध्र प्रदेश शाखा के केन्द्र व्यवस्था हिन्दी के प्रचार-प्रसार में लगे हुए हैं। वे नि:शुल्क सायंकालीन हिन्दी वर्गों का संचालन करते हैं। हिन्दी पढ़ाते हैं। आन्ध्र प्रदेश सरकार भी त्रिभाषा सूत्र को अमल कर रही है। वहाँ के छात्र द्वितीय भाषा के रूप में 6वीं कक्षा से 10वीं कक्षा तक अनिवार्य विषय के रूप में हिन्दी पढ़ रहे हैं। आर्य समाज भी हिन्दी के प्रचार-प्रसार कार्य में हाथ बँटा रहा है। अत: वहाँ हम कोई विशेष अवरोध का सामना नहीं कर रहे हैं किन्तु मैकाले के मानस पुत्रों की संख्या आजकल हमारे यहाँ बढ़ रही है। अत: वहाँ के लोग अब अपने बच्चों को अंग्रेजी माध्यम के स्कूलों में भेज रहे हैं। हिन्दी, तेलुगु, कन्नड़, मराठी आदि माध्यम के जो पाठशालाएँ चल रही हैं उनमें आजकल गरीब लोगों के बच्चे ही पढ़ रहे हैं। अब हमारे प्रान्त के सम्पन्न लोग अपने बच्चों को अमेरिका, इंग्लैण्ड, कनाडा, आस्ट्रेलिया, न्यूजीलैण्ड आदि देशों में भेजकर पढ़ा रहे हैं ताकि वे डालर कमाने के योग्य बनें। लोगों की बदलती मानसिकता भविष्य में हिन्दी और अन्य भारतीय भाषाओं के लिए संकट का कारण बन सकती है।

प्रश्न : तमिलनाडु में हिन्दी विरोध में कितनी सच्चाई है ? और आगे की क्या सम्भावना है ?

उत्तर : तमिलनाडु में हिन्दी भाषा का विरोध नहीं है। वहाँ राजनीतिक कारणों से हिन्दी का विरोध हो रहा है। जो लोग बाहर हिन्दी का विरोध कर रहे हैं उनके बच्चे घर में हिन्दी सीख रहे हैं। दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार सभा, मद्रास द्वारा संचालित विभिन्न हिन्दी परीक्षाओं में हर साल लाखों बच्चे भाग ले रहे हैं।

उच्च शिक्षा एवं शोध संस्थान, दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार सभा, मद्रास में तथा मद्रास विश्वविद्यालय में हर वर्ष कई छात्र एम०ए० (हिन्दी), एम०फिल० (हिन्दी), पी-एच०डी० (हिन्दी), डी०लिट्० (हिन्दी) में प्रवेश ले रहे हैं। दूर शिक्षा केन्द्र दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार सभा, मद्रास भी विशेष लोकप्रिय है। इसमें प्रवेश लेकर कई लोग एम०ए०, एम०फिल० (हिन्दी), पी-एच०डी० कर, हिन्दी में अपनी योग्यता बढ़ा रहे हैं।

प्रश्न : दक्षिण भारतीय भाषाओं के देवनागरी लिपि में लिखने पर क्या कठिनाई है ?

उत्तर : दक्षिण भारतीय भाषाओं को देवनागरी लिपि में लिखने में कोई कठिनाई नहीं है। किन्तु विभिन्न भाषा-भाषी अपनी अस्मिता को खोना नहीं चाह रहे हैं। नागरी लिपि परिषद के प्रयासों के बाद भी यह कार्य अभी तक नहीं हो पा रहा है। दक्षिण भारतीय भाषाओं की कविताओं का जब हिन्दी अनुवाद होगा तब तेलुगु, तमिल, कन्नड़, मलयालम की मूल कविताओं का नागरी लिप्यंतरण भी छापें तो धीरे-धीरे इस ओर आम सहमति सम्भव है। इसीलिए आदान-प्रदान के अन्तर्गत 'संकल्य' अनुवादाकों से हिन्दी लित्यंतरण सहित अनुवाद प्रस्तुत करने का आग्रह कर रहा है।

प्रश्न : तेलुगु एवं हिन्दी दोनों ही भाषाओं के आप बराबर के लेखक हैं। राष्ट्रभाषा हिन्दी के उत्थान में तेलुगु कहाँ तक सहायक दिखती है ?

उत्तर : आन्ध्र के लोग हिन्दीप्रेमी है। उन्होंने हिन्दी के कई ग्रन्थों का अनुवाद तेलुगु में आजादी से पहले ही किया है। जब मैं 9वीं कक्षा में था तब मैंने प्रेमचंद, जैनेन्द्र, रवीन्द्र, शरतचन्द्र, गोर्की एवं टालस्टाय के उपन्यासों का अनुवाद तेलुगु इस सन्दर्भ में एक समस्या यह है कि दक्षिण के लोग हिन्दी की श्रेष्ठ रचनाओं का अनुवाद अपनी भाषा में कर रहे हैं और अपनी भाषा की श्रेष्ठ रचनाओं का अनुवाद हिन्दी में प्रस्तुत कर रहे हैं। किन्तु दक्षिण में निवास करने वाले हिन्दी भाषा भाषी इस ओर कोई विशेष प्रयास नहीं कर रहे हैं। दक्षिण के अहिन्दी भाषी लोग ऐसा मानते हैं कि उनके मनों में राष्ट्रभाषा एवं राजभाषा हिन्दी के प्रति जितना प्रेम है उतना प्रेम दक्षिण में निवास करने वाले हिन्दी भाषियों के मन में दक्षिण भारत की भाषाओं के प्रति नहीं है।

अत्र-तत्र-सर्वत्र

डॉ० बदरीनाथ कपूर का अमृत महोत्सव

व्याकरणशास्त्री डॉ० बदरीनाथ कपूर के अमृत महोत्सव के अवसर पर रविवार, 16 सितम्बर 2007 को लाजपत नगर, वाराणसी स्थित उनके आवास पर हिन्दी के साहित्यकार एकत्रित हुए। सभी ने उनके दीर्घायु जीवन की कामना की।

डॉ० युगेश्वर ने इस अवसर पर डॉ० कपूर की मेधा, रचना-शक्ति और प्रतिभा की प्रशंसा करते हुए उन्हें उच्चकोटि का व्याकरणशास्त्री कहा। हिन्दी के यशस्वी प्रकाशक पुरुषोत्तमदास मोदी ने डॉ० कपूर के रचना कर्म की प्रशंसा की और कहा कि डॉ० बदरीनाथ कपूर एक व्यक्ति नहीं बहुआयामी कोश हैं। वे भाषाविद् हैं, पल क्षण नये-नये शब्दों को मस्तिष्क में संग्रह करते रहते हैं। समाचार-पत्रों तथा पत्र-पत्रिकाओं की भाषा पर उनकी दृष्टि बराबर बनी रहती है। वे मात्र भाषाविद् नहीं मुख्यत: चिन्तक हैं। उनका चिन्तन प्रखर है, उसमें अध्यात्म भी है। शब्द चिन्तन करते-करते योग वासिष्ठ का अध्ययन और विश्लेषण सहजता से करने लगते हैं। आज डॉ० बदरीनाथ कपूर ऐसा दूसरा शब्दकार नहीं दीखता जो प्रहरी की भाँति शब्दों और भाषा की रक्षा कर सके। उन्हें अभी हिन्दी के विविध भाषा कोशों की पूर्ति करते जाना है। उन्हें शत-प्रतिशत अंक प्राप्त करना है। कपूरजी कर्मनिष्ठ हैं, कर्मशील हैं, उनका सान्निध्य हमें अनेक वर्षों तक मिलता रहे। कामना है—जीवेम शरद: शतम।

संस्कृत विश्वविद्यालय के भूतपूर्व कुलपति पं० शिवजी उपाध्याय, भूतपूर्व न्यायाधीश गणेशदत्त दूबे, मनु शर्मा, गीतकार श्रीकृष्ण तिवारी तथा डॉ० अशोककुमार सिंह, यशस्वी लेखक पं० धर्मशील चतुर्वेदी, डॉ० देवव्रत चौबे, डॉ० श्यामलाकान्त वर्मा, डॉ० रामसुधार सिंह, डॉ० उदयप्रताप सिंह, डॉ० जितेन्द्रनाथ मिश्र, विजय प्रकाश बेरी, डॉ० पवनकुमार शास्त्री, एडवोकेट द्वय कालीप्रसाद खन्ना तथा ज्ञानचन्द खत्री, उद्योगपति दीनानाथ झुनझुनवाला तथा रामगोपाल बहल ने इस अवसर पर डॉ० बदरीनाथ कपूर का हार्दिक अभिनन्दन करते हुए उनके व्याकरण शास्त्र, मानक ग्रन्थों की रचना और शब्दकोश रचना की प्रशंसा की। इस कार्यक्रम की एक विशेष बात यह थी कि बिना किसी औपचारिकता के सहज भाव से हास-परिहास करते हुए विद्वानों ने डॉ० कपूर के लेखन कार्य की प्रशंसा की। लोगों ने चुटकुले सुनाए। व्यंग्य और संस्मरण भी सुनाए। सभी के मन में डॉ० बदरीनाथ कपूर की साधना के प्रति गहरे सम्मान का भाव था। सभी लोगों का कहना था कि इस युग में इस प्रकार की साधना दुर्लभ है। ईश्वर डॉ० कपूर को स्वस्थ रखें जिससे वे हिन्दी की अधिक से अधिक सेवा करें।

अपने सम्बन्ध में प्रकट किए गए विचारों के प्रति कृतज्ञता प्रकट करते हुए डॉ० बदरीनाथ कपूर ने कहा—आज सभी आदरणीय विद्वान् मित्रों ने मेरे सम्बन्ध में जो विचार प्रकट किए हैं वे वस्तुत: आपकी उदारता और सहृदयता के ही अधिक परिचायक हैं। वास्तविकता सम्भवत: ऐसी न हो। एक व्यक्ति स्वप्न देख रहा था—आकाश में उसे विगत जीवन के सुखद दृश्य दिखाई दिए। इतने में जब उसकी दृष्टि धरती पर पड़ी तो उसे लगा कि मैं समुद्र तट पर चल रहा हूँ और मेरे साथ मेरे प्रभु भी चल रहे हैं और दोनों के पदचिह्न बालू पर बराबर अंकित हो रहे हैं। पुन: उसकी दृष्टि आकाश की ओर उठी। इस बार उसे अपने जीवन के दु:खद दृश्य दिखाई दिए। उसने एक बार फिर धरती की ओर अपनी दृष्टि दौड़ाई। इस बार बालू पर एक ही व्यक्ति के पदचिह्न थे। उसने कहा, हे भगवान तू अच्छा पिता है जो दु:ख की घड़ी में मेरा साथ छोड़ देता है। प्रभु ने उत्तर दिया कि ऐसा नहीं है मेरे पुत्र, तुम्हें दु:खी और संतप्त देखकर मैं तुम्हें गोद में उठा लिया करता हूँ। मैं इस कथा को अधिक विस्तार नहीं देना चाहता। आपने मार्गदर्शक और संरक्षण शब्दब्रह्म के महान उपासक आचार्य रामचन्द्र वर्मा की शब्द-ज्योति ही मुझे सचेष्ट और सक्रिय दिखलाई देती है। बस, उसने मुझे अपना माध्यम भर बनाया है। इन्हीं शब्दों के साथ आप सभी को पुन: नमन्!

इस अवसर पर डॉ० बदरीनाथ कपूर के पुत्र दीपक कपूर ने अतिथियों को धन्यवाद दिया। उनकी पत्नी तथा परिवार के सदस्यों ने आगत साहित्यकारों का हार्दिक स्वागत किया। इस अवसर पर डॉ० कपूर की पुत्री डॉ० मधु साहनी ने अत्यन्त भावपूर्ण गीत गाया।

पाण्डित्य सुमेरु आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी जन्मशती समारोह

चेन्नई स्थित साहित्यानुशीलन समिति के तत्त्वावधान में आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी की जन्मशती शनिवार, 8 सितम्बर 2007 को राजेन्द्र बाबू भवन के सभागार में मनाई गई। अध्यक्षता डॉ० एम० शेषन ने की। डॉ० विद्या शर्मा की स्वरचित सरस्वती-वन्दना के पश्चात श्री प्रकाशमल भण्डारी ने आचार्य द्विवेदी के चित्र पर माल्यार्पण किया। उपस्थित लेखकों ने भी चित्र पर फूल चढ़ाकर श्रद्धा समर्पित की। समाजसेवी शोभाकान्तदासजी ने आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी के व्यक्तित्व एवं कृतित्व पर विशिष्ट आलेख प्रस्तुत करने वाले अनुशीलकों को शाल प्रदान कर सम्मानित किया। समिति-अध्यक्ष डॉ० इंदरराज बैद ने कहा कि यह समिति का सौभाग्य है कि डॉ० रामकुमार वर्मा, सुभद्राकुमारी चौहान और सोहनलाल द्विवेदी की तरह आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी की जन्मशताब्दी भी वह समारोहपूर्वक मना रही है। वे साक्षात् पाण्डित्य के सुमेरु थे। इस अवसर पर चार शोधपूर्ण आलेख प्रस्तुत किये गये। डॉ० एम० शेषन ने आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी की रचनाधर्मिता के मूल मानववादी स्वर पर अपना विद्वत्तापूर्ण आलेख प्रस्तुत किया। द्विवेदीजी के शिष्य रहने के कारण उन्होंने अत्यन्त भावुक होकर कुछ संस्मरण सुनाए।

हिन्दी-सेवा पत्रिका के सम्पादक, हिन्दी-तमिल-अंग्रेजी विद्वान् डॉ० एस० सुब्रह्मण्यन विष्णुप्रिया ने द्विवेदीजी की पाँच कृतियों—हिन्दी साहित्य की भूमिका, कबीर, अशोक के फूल, बाणभट्ट की आत्मकथा और अनामदास का पोथा पर आधारित अनुशीलन ललित शैली में प्रस्तुत किया। हिन्दी अधिकारी सुकवि श्री पी०आर० वासुदेवन शेष ने द्विवेदीजी के उपन्यासों का विहगावलोकन प्रस्तुत किया। आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी की साहित्य-मर्मज्ञता पर डॉ० इंदरराज बैद ने अपना प्रपत्र प्रस्तुत किया।

इस अवसर पर लब्धप्रतिष्ठ साहित्यकार डॉ० बालशौरि रेड्डी ने आचार्य द्विवेदीजी से प्राप्त पत्रों को उद्धृत करते हुए उनके भव्य व्यक्तित्व को रूपायित किया। काव्य-रचनाकार श्री गिरीश पाण्डे ने संस्मरणपूर्वक भावांजलि दी। डॉ० रुक्माजी राव, श्री नरपत मेहता, श्री मनोजकुमार पाण्डेय, श्री अनिल अवस्थी, श्री जवाहरलाल मधुकर, श्रीमती सी०बी० प्रसाद, श्रीमती शान्ति मोहन आदि अनेक साहित्यकार-पत्रकार समारोह में उपस्थित थे।

नलिनी आर्ट्स कालेज के साहित्यिक कार्यक्रम

प्रेमचंद जयन्ती

नलिनी आर्ट्स कॉलेज, वल्लभ विद्यानगर, गुजरात में हिन्दी विभाग ने 31 जुलाई 2007 को प्राचार्य श्री आर०एन० परमार की अध्यक्षता, विभागाध्यक्ष डॉ० बी० राम भोला के निर्देशन तथा प्राध्यापक डॉ० जगन्नाथ पण्डित की प्रेमचंद साहित्य की प्रासंगिकता पर प्रस्तुत समीक्षात्मक टिप्पणी से अध्यापकों और छात्रों ने प्रेमचंद जयन्ती मनायी।

आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी जन्मशती

18 अगस्त 2007 को डॉ० धनंजय चौहान ने 'आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी' की समस्त साहित्यिक कृतियों में से अपेक्षित उदाहरण देकर सांस्कृतिक चिन्तन को तद्युगीन एवं अद्यतन स्थितियों का विस्तृत अध्ययन प्रस्तुत किया।

विश्वभाषा हिन्दी का रोजगारपरक स्वरूप

21 अगस्त 2007 को प्रो० हेमराज मीणा, क्षेत्रीय निदेशक केन्द्रीय हिन्दी संस्थान, अहमदाबाद ने इस विषय पर शासकीय संस्थानों द्वारा हो रही गतिविधियों के साथ विश्व भाषा हिन्दी के रोजगारपरक स्वरूप की व्यावहारिकता की जानकारी दी।

तुलसी जयन्ती तथा आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी जन्मशताब्दी

गुजरात विद्यापीठ के महादेव देसाई महाविद्यालय अहमदाबाद में तुलसीदास की 510वीं जयन्ती तथा आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी की जन्मशताब्दी मनाई गई। प्रो० मालती दुबे ने आमंत्रित अतिथियों का स्वागत करते हुए तुलसीदास के अवदान तथा हजारीप्रसाद द्विवेदी के महत्त्व को रेखांकित किया। डॉ० रघुनाथ भट्ट ने कहा—तुलसीदास सर्वत्र हैं, गाँव हो या शहर। राष्ट्रपिता महात्मा गाँधी को रामराज्य का सपना तुलसी ने ही दिखाया।

रंजना सक्सेना ने आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी की जन्मशताब्दी पर स्मरण करते हुए कहा—द्विवेदीजी ने साहित्य की प्राय: सभी विधाओं में रचना की—इतिहास का पुनर्लेखन किया 'कुटज' के रूप में, ललित निबन्ध की नई परम्परा दी, बाणभट्ट की आत्मकथा, चारुचन्द्र लेख आदि उपयास दिए। तुलसी की भाँति उन्होंने भी जीवन में संघर्ष किया। वे कहते थे—मन पर सवारी करो मन को अपने पर सवार मत होने दो। संचालन छात्रा उर्वशी ने किया।

यूनेस्को के रजिस्टर में ऋग्वेद की पाण्डुलिपि

यूनेस्को के विश्व स्मृति रजिस्टर-2007 में ऋग्वेद की 30 पाण्डुलिपियाँ शामिल की गयी हैं। उनमें सबसे पुरानी पाण्डुलिपि सन् 1464 की है। पर्यटन और संस्कृति मंत्री अम्बिका सोनी ने लोकसभा में बताया कि संस्कृति मंत्रालय के अन्तर्गत राष्ट्रीय पाण्डुलिपि मिशन ने यूनेस्को के विश्व स्मृति रजिस्टर में शामिल करने के लिए भण्डारकर ओरियंटल रिसर्च इंस्टीट्यूट (पुणे) से ऋग्वेद की पाण्डुलिपियों का नामांकन प्रस्तुत किया था। इनमें 30 पाण्डुलिपियाँ विश्व स्मृति रजिस्टर-2007 में शामिल कर ली गई हैं।

डॉ० रामकुमार वर्मा के स्मृति चिह्न

हिन्दी एकांकी के जनक सुप्रसिद्ध नाटककार डॉ० रामकुमार वर्मा के स्मृति चिह्न 20 सितम्बर को इलाहाबाद संग्रहालय को सौंप दिए गये। वर्माजी की सुपुत्री डॉ० राजलक्ष्मी वर्मा (इलाहाबाद विश्वविद्यालय, संस्कृत विभाग) के अनुसार उनके पिता डॉ० वर्मा को प्राप्त 'पद्मभूषण अलंकरण' सहित उनके वस्त्र, छाता, घड़ी, चश्मे आदि चीजें संग्रहालय को दान कर दी गयीं।

हिन्दी अकादमी, दिल्ली पुनर्गठित संचालन समिति

अध्यक्ष : श्रीमती शीला दीक्षित, मुख्यमंत्री
उपाध्यक्ष : डॉ० मुकुन्द द्विवेदी

सदस्य संचालन समिति : डॉ० अर्चना वर्मा, डॉ० विश्वनाथ त्रिपाठी, श्री धनंजय सिंह, डॉ० एच० बालसुब्रमण्यम्, डॉ० केदारनाथ सिंह, रमाकांत गोस्वामी, सुरेश तंवर, श्रीमती सविता असीम, डॉ० अशोक चक्रधर, सुरेन्द्र शर्मा, हिमांशु जोशी, डॉ० विभा गुप्ता, डॉ० हरीश नवल, श्री अजीत कुमार, डॉ० नित्यानंद तिवारी, श्री हबीब अख्तर, डॉ० सत्येन्द्र कुमार तनेजा, सरदार सुरजीत सिंह जोबन, श्री अरुण जैमिनी, श्री अमरनाथ 'अमर', श्री राजेन्द्रनारायण सक्सेना।

कविता का कोई घर नहीं

हिन्दी दिवस और दूरदर्शन स्थापना दिवस की पूर्व संध्या पर शुक्रवार को नागरी नाटक मण्डली, वाराणसी में परिसंवाद और नाटक 'कविता का घर' का मंचन किया गया। समारोह में ख्यातिलब्ध कवि कृष्ण कलपित ने कहा—कविता का कोई घर नहीं होता और कविता बेघर लोगों की कला है। ज्ञानपीठ पुरस्कार से सम्मानित कवि ज्ञानेन्द्र पति का कहना था—सभ्यता की बुनियाद और सभ्यता के संकट दोनों की शुरुआत घर से होती है। अरविन्द त्रिपाठी ने कहा—कवि एक घर में जरूर पैदा होता है लेकिन जीवनभर घर की तलाश करता है। वह अपने नहीं दूसरों के घर की चिन्ता करता है। सच्चे कवियों के घर नहीं होते। वह किसी के घर में पैदा होते हैं और बेघर ही मरते हैं। परिसंवाद के उपरान्त घर पर आधारित नाटक 'कविता के घर' का मंचन किया गया।

मार्घेरिटा महाविद्यालय में हिन्दी दिवस

असम के पूर्वोत्तर स्थित मार्घेरिटा महाविद्यालय में 14 सितम्बर 2007 को हिन्दी दिवस का आयोजन किया गया। कॉलेज के अध्यक्ष डॉ० बुद्धिन गगै की अध्यक्षता में सम्पन्न हुई। सभा में मार्कण्डेय पुरस्कार से सम्मानित डिगबोई महिला महाविद्यालय के हिन्दी विभागाध्यक्ष डॉ० हरेराम पाठक ने मुख्य अतिथि का पद सुशोभित किया। मार्घेरिटा महाविद्यालय की विभागाध्यक्ष डॉ० मृणाली कुँवर ने उद्देश्य व्याख्या किया तथा विभाग की डॉ० पुष्पा सिंह ने इस अवसर पर अपना वक्तव्य प्रस्तुत किया। छात्राओं ने 'वीणावादिनी वर दे' सरस्वती वन्दना का गान किया। कॉलेज के छात्रों के मध्य अन्ध विश्वास पर विचार, आकस्मिक वक्तृता, राष्ट्रभाषा हिन्दी पर लेख तथा मौलिक रचना पर आधारित प्रतियोगिताएँ रखे गए। जिनमें हिन्दी विभाग के ही 150 छात्र उपस्थित थे। अध्यक्ष महोदय ने हिन्दी में अपना वक्तव्य रखा। मुख्य अतिथि ने अवगत कराया कि हिन्दी का प्रचार सबसे ज्यादा असम में हुआ है। असम में हिन्दी का पहला लेखक असमिया ही था। राधाकृष्ण और रूसी नेता स्टरलिन की भेंट का उदाहरण देकर उन्होंने बताया कि हमें हिन्दी के साथ दूसरी भाषाओं को भी उसी आग्रह से सीखना चाहिए तभी हिन्दी को एक दिन गौरव की भाषा का स्थान प्रदान कर सकेंगे। पुरस्कार वितरण के बाद राष्ट्रगीत के साथ सभा भंग हुई।

पत्र-पत्रिका प्रदर्शनी

लोकवार्ता शोध संस्थान, सोनभद्र में 31 जुलाई 2007 को प्रमुख साहित्यकारों के, डॉ० अर्जुनदास केसरी के नाम लिखे 1500 से अधिक अत्यन्त महत्वपूर्ण पत्रों की प्रदर्शनी लगायी गयी।

14 सितम्बर 2007 को हिन्दी दिवस के अवसर पर हिन्दी की पुरानी नई पत्र-पत्रिकाओं की प्रदर्शनी लगायी गई। जिनमें कल्पना, आलोचना, साहित्य सन्देश, वाणी, सरस्वती, आजकल, धर्मयुग, दिनमान, साप्ताहिक हिन्दुस्तान, कादम्बिनी, मतवाला आदि 300 पत्रिकाएँ थीं।

पूर्व राष्ट्रपति एपीजे अब्दुल कलाम की सात शपथ

डॉ० एपीजे अब्दुल कलाम अपने पद से निवृत होने के बाद राष्ट्रपति भवन को अलविदा कह चुके हैं। पीछे रह गई हैं बहुत सारी यादें और वे सात शपथ जो उन्होंने युवा वर्ग को दिलाई थीं। वे शपथ आज भी प्रासंगिक हैं और आगे भी रहेंगी।

1. मैं मानता हूँ कि मुझे अपने जीवन में एक लक्ष्य तय करना है। लक्ष्य पाने के लिए मैं ज्ञान हासिल करूँगा, मेहनत करूँगा और जब कोई समस्या आई, तो उस पर विजय प्राप्त करके सफल बनूँगा।

2. अपने देश का एक युवा होने के नाते मैं अपने कार्य में सफल होने के लिए हिम्मत से काम करूँगा और दूसरों की सफलता पर प्रसन्न होऊँगा।

3. मैं हमेशा अपने घर, परिवेश और आसपास के पर्यावरण को स्वच्छ और सुव्यवस्थित रखूँगा।

4. मैं मानता हूँ कि सदाचार से चरित्र निश्छल बनता है, निश्छल चरित्र से घर में मेलजोल रहता हैद्व घर में मेलजोल से राष्ट्र व्यवस्थित रहता है और व्यवस्थित राष्ट्र से विश्व में शान्ति रहती है।

5. मैं भ्रष्टाचार से मुक्त एक ईमानदार जीवन व्यतीत करूँगा और सदाचारपूर्ण जीवन अपनाने के लिए स्वयं दूसरों के समक्ष उदाहरण पेश करूँगा।

6. मैं देश में ज्ञान का प्रकाश फैलाऊँगा और कोशिश करूँगा कि हमेशा फैलाता रहूँ।

7. मैं मानता हूँ कि यदि मैं हरेक कार्य ठीक से करूँ, तो सन् 2020 तक एक विकसित भारत बनने के मिशन को साकार करने में अपना योगदान दे सकूँगा।

दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार सभा की स्थापना मद्रास में 1927 में हुई।

सम्मान-पुरस्कार

यार्लगड्डा लक्ष्मीप्रसाद को पुश्किन सम्मान

मास्को स्थित 'भारत मित्र समाज' ने प्रसिद्ध दक्षिण भारतीय हिन्दीसेवी और तेलुगु भाषी लेखक **यार्लगड्डा लक्ष्मीप्रसाद** को वर्ष 2007 के लिए 'पुश्किन सम्मान' से सम्मानित करने का निर्णय किया है।

इस सम्मान के अन्तर्गत यार्लगड्डा लक्ष्मीप्रसाद को पन्द्रह दिन की यात्रा पर रूस बुलाया जाएगा तथा उन्हें मास्को और पीतेरबुर्ग नगरों की यात्रा कराई जाएगी। इस यात्रा के दौरान रूस के लेखकों, कवियों और बुद्धिजीवियों के साथ उनकी मुलाकातें भी कराई जाएँगी।

समकालीन साहित्य जगत में यार्लगड्डा लक्ष्मीप्रसाद की हिन्दी एवं तेलुगु में प्रकाशित पुस्तकों को महत्त्वपूर्ण स्थान दिया जाता है। हिन्दी में अब तक उनकी 10 किताबें प्रकाशित हुई हैं और तेलुगु में 22 किताबें छप चुकी हैं। यार्लगड्डा लक्ष्मीप्रसाद तेलुगु के महत्त्वपूर्ण उपन्यासकार हैं और उन्होंने हिन्दी साहित्य के इतिहास का और हिन्दी के अनेक लेखकों के उपन्यासों और कहानी-संग्रहों का तेलुगु में अनुवाद किया है। यार्लगड्डा लक्ष्मीप्रसाद को 2003 में भारत सरकार पद्मश्री से अलंकृत कर चुकी है। आजकल वे आन्ध्र प्रदेश हिन्दी अकादमी के अध्यक्ष हैं। उन्हें अनुवाद के लिए केन्द्रीय साहित्य अकादमी पुरस्कार मिल चुका है।

केन्द्रीय हिन्दी संस्थान के पुरस्कार घोषित

केन्द्रीय हिन्दी संस्थान आगरा द्वारा हर वर्ष दिए जाने वाले हिन्दीसेवी सम्मान योजना के वर्ष 2005 और 2006 के पुरस्कारों की घोषणा की गई। ये पुरस्कार गंगाशरण सिंह, गणेशशंकर विद्यार्थी, आत्माराम, सुब्रमण्यम भारती, राहुल सांकृत्यायन, जार्ज गिर्यसन, मोटूरि सत्यनारायण जैसे दिवंगत हिन्दी सेवियों के नाम पर दिए जाते हैं।

वर्ष 2005 के लिए विभिन्न पुरस्कारों से सर्वश्री आर० वेंकट कृष्णन, के०एम० सामुवल, फु० गोकुलानंद शर्मा-एच पहलीरा (संयुक्त रूप से), नवनीत आर ठक्कर-सुवीक्ष्ण कुमार शर्मा (संयुक्त रूप से), भारत डोगरा, रमेश उपाध्याय, देवेन्द्र मेवाड़ी, महेन्द्र मधुप, मंजूर एहतेशाम, कृष्णदत्त पालीवाल, भगवान सिंह, रमेशचंद्र शाह, इंद्रा दसानायक (श्रीलंका), कृष्णकिशोर (अमेरिका) को पुरस्कृत किए जाने की घोषणा की गई। इसी प्रकार वर्ष 2006 के लिए जिन विद्वानों और हिन्दी सेवियों को पुरस्कृत किया गया वे हैं सर्वश्री मुहम्मद इकबाल, टीवी कट्टीमनी, इंद्रनाथ चौधरी, शशिकांत रघुनाथ जोशी- विलास सोनू सुर्लकर (संयुक्त रूप से), शरद दत्त, रमणिका, गुप्ता, गडग सिंह वल्दिया, रेखा अग्रवाल, प्रदीप शर्मा, कमला प्रसाद,

सूरजपाल चौहान, साधना सक्सेना, शेखर पाठक, मारिआला आफ्रेदी (इटली), प्रेमलता वर्मा (अर्जेंटीना)। केन्द्रीय हिन्दी संस्थान के उपाध्यक्ष रामशरण जोशी के मुताबिक पुरस्कृत हर विद्वान को पुरस्कार के तहत एक लाख रुपये नकद, प्रशस्ति-पत्र और शॉल दिया जाएगा।

ये पुरस्कार राष्ट्रपति प्रतिभा पाटिल द्वारा नवम्बर में प्रदान किये जाने की सम्भावना है, पहले ये हिन्दी दिवस 14 सितम्बर को ही दिए जाते थे।

डॉ० श्रीरंजन सूरि को हेमचन्द्र सूरि सम्मान

जैन विद्या के सुप्रसिद्ध विद्वान् **डॉ० श्रीरंजन सूरिदेव** का 2006 के 12वें आचार्य हेमचन्द्र सूरि सम्मान के लिए चयन किया गया है। यह सम्मान उन्हें उनके जैन साहित्य में आजीवन किये गये कार्यों के लिए दिया जायगा।

सम्मान स्वरूप इक्यावन हजार की राशि और कलिकाल की स्वर्णमण्डित प्रतिमा प्रदान की जायगी। यह समारोह 5 जनवरी 2008 को योगीलाल लहर चन्द प्राच्य विद्या संस्थान दिल्ली में आयोजित है।

डॉ० श्रीरंजन सूरिदेव प्राकृत-जैनशास्त्र के प्रकाण्ड विद्वान् हैं। वे प्राकृत शोध संस्था वैशाली के पूर्व शोध निदेशक रह चुके हैं।

दिविक रमेश सम्मानित

कला, संस्कृति और साहित्य के क्षेत्र में उत्तम योगदान के एि इस वर्ष का 'द होम ऑव लैटरस इण्डिया' भुवनेश्वर, उड़ीसा का क्रियेटिव जॉयन्ट 2007 सम्मान **डॉ० दिविक रमेश** को मिला है। साथ ही संस्था ने इन्हें फैलो की उपाधि भी प्रदान की है।

डॉ० संतोष भदौरिया को 'वागीश्वरी सम्मान'

महात्मा गाँधी अन्तरराष्ट्रीय हिन्दी विश्वविद्यालय, वर्धा में क्षेत्रीय निदेशक **डॉ० संतोष भदौरिया** को मध्यप्रदेश हिन्दी साहित्य सम्मेलन का प्रतिष्ठित 'वागीश्वरी सम्मान' वर्ष 2006 के लिए प्रदान किया गया है। यह सम्मान उनकी बहुचर्चित आलोचना पुस्तक 'शब्द-प्रतिबन्ध' जो मेधा बुक्स, नई दिल्ली से प्रकाशित है, अंग्रेजी राज के दौर में प्रतिबन्धित की गई हिन्दी पत्र-पत्रिकाओं के विश्लेषण पर केन्द्रित है, जिसमें परतंत्र भारत के पत्रकार, सम्पादक, प्रकाशक एवं प्रेस आदि के जेल-जब्ती-जुर्माना का प्रामाणिक एवं तथ्यात्मक विवरण है।

डॉ० बालशौरि रेड्डी पुरस्कृत

डॉ० बालशौरि रेड्डी का जन्म आन्ध्र प्रदेश के कडुपा जिले के गोल्लाला गुडूर गाँव में 1928 में हुआ। आपको तेलुगु, तमिष, कन्नड, उर्दू और अंग्रेजी भाषाओं का भी ज्ञान है। आपने बाल्यावस्था से ही लेखन कार्य शुरू किया। आपने उपन्यास, कहानी, नाटक आदि विधाओं में अनेक पुस्तकों के अनुवाद किए हैं। आपकी मौलिक कृतियों में 12 उपन्यास, 9 बाल साहित्य की पुस्तकें तथा तेलुगु में संस्कृति और साहित्य पर 7 पुस्तकें प्रकाशित हैं। आपकी पुरस्कृत कृतियाँ हैं—पंचामृत, जिन्दगी की राह, देवनी, लकूमा, तेलुगु साहित्य के निर्माता, शुभ निमंत्रण, धरती मेरा माँ आदि। आपको कई विशिष्ट सम्मान एवं उपाधियाँ प्राप्त हैं। केन्द्रीय हिन्दी निदेशालय द्वारा आपके 'कालचक्र' उपन्यास के लिए आपको एक लाख रुपये का नकद पुरस्कार प्रदान किया गया है। आप एस०वी० विश्वविद्यालय, तिरुपति द्वारा मानद डी०लिट्० की उपाधि तथा महात्मा गाँधी काशी विद्यापीठ, वाराणसी द्वारा भी सम्मानित हैं।

पुरस्कृत कृति 'कालातीत व्यक्ति' श्रीदेवी कृत तेलुगु उपन्यास कालातीत व्यक्तुलु का बालशौरि रेड्डी द्वारा किया गया हिन्दी अनुवाद है। अनुवादक ने उपन्यास के मनोवैज्ञानिक पक्ष को हिन्दी अनुवाद में ढालते हुए लेखिका द्वारा प्रयुक्त प्रयोगधर्मी भाषा को कुशलता से रूपांतरित किया है। इस क्रम में उपन्यास में वर्णित आन्ध्र की आंचलिकता को अनुवाद में भी सटीक अभिव्यक्ति मिल गई है। यही कारण है कि यह कृति हिन्दी अनुवाद में भारतीय कथा साहित्य को एक अमूल्य योगदान मानी गई है। साहित्य अकादमी, दिल्ली ने इस अनुवाद के लिए श्री रेड्डी को 20 हजार रुपये का पुरस्कार प्रदान किया है।

किताबें

हो जाता है
अपनों का व्यवहार पराया
कभी-कभी लगता है
अजनबी अपना ही साया
लेकिन किताबें
निभाती हैं सदा सदा
बेजान सही पर
भरी हुई हैं भावनाओं से
मुक्त कर देती हैं
क्षण में मानसिक यातनाओं से
किताबें लगाती हैं पार
मुश्किल राहों से
इतिहास की धरोहर हैं
ज्ञान और विज्ञान हैं
बाइबिल, कुरान, गीता
वेद पुराण हैं किताबें
संस्कृति का ज्ञान हैं किताबें
गुरु मित्र बन्धु
पथ-प्रदर्शक हैं किताबें
मानवता की प्रतीक
दार्शनिक हैं किताबें
जीवन का अर्थ बताती हैं किताबें

—आरती सारंग, भोपाल

संगोष्ठी/लोकार्पण

देश को स्वावलंबी बनाने की दिशा में

देश को स्वावलंबी बनाने के लिए अच्छे निर्णय स्वयं लेकर सामाजिक उद्यमों को आगे बढ़ाया जाय इससे देश की गरीबी मिटाने में आधार मिलेगा। उक्त विचार स्टेनफोर्ड विश्वविद्यालय, कैलीफोर्निया (अमेरिका) के **सोमित राहा** ने व्यक्त किये।

वे **महात्मा गांधी अन्तरराष्ट्रीय हिन्दी विश्वविद्यालय** में अहिंसा एवं शान्ति अध्ययन विभाग के तत्त्वावधान में दिनांक 23 अगस्त 2007 को 'अन्तरराष्ट्रीय परिस्थिति में अहिंसा' विषय पर आयोजित विचार-गोष्ठी में बोल रहे थे। कार्यक्रम की अध्यक्षता डॉ० हनुमानप्रसाद शुक्ल ने की। प्रमुख वक्ता के रूप में सर्वोदय मण्डल, आन्ध्र प्रदेश के महामंत्री प्रो० सर्वोदयप्रसाद उपस्थित थे।

इस अवसर पर श्री राहा ने दृष्य-श्रव्य प्रस्तुति के माध्यम से मुम्बई का डब्बेवाला, कैलास सत्यार्थी के 'रगमार्क', 'सुलभ' के डॉ० बिंदेश्वर पाठक तथा 'ग्रामीण' के डॉ० मोहम्मद युनूस आदि द्वारा स्वावलंबी भारत की दिशा में किए गये कार्यों को प्रदर्शित किया। 'अपनी अर्थनीति खुद बनाये' गाँधीजी के इस सन्देश को उन्होंने अपने वक्तव्य में अधोरेखित किया।

प्रो० सर्वोदय प्रसाद ने कहा कि स्वस्थ रहना अहिंसा का प्रयोग है। भौतिक रूप से लोगों की आस्था अहिंसा पर होती है। यदि हम गाँधीजी के विचारों को प्रासंगिक मानते हैं तो उनके विचारों को लेकर आगे बढ़ना चाहिये, ऐसी अपील उन्होंने अपने वक्तव्य में की।

कार्यक्रम के आरम्भ में महात्मा गाँधी फ्यूजी गुरुजी शान्ति अध्ययन केन्द्र के निदेशक प्रो० मनोज कुमार ने अतिथियों का स्वागत करते हुए विषय प्रवेश कराया। अध्यक्षीय वक्तव्य देते हुए डॉ० शुक्ला ने कहा कि लोकतंत्र की समाजवादी प्रक्रिया गाँधीजी के विचारों के रास्ते से ही जाती है। उन्होंने कहा कि सकारात्मक परिवर्तन के लिए मीडिया को अपना चरित्र बदलना होगा।

इस अवसर पर प्रो० आत्मप्रकाश श्रीवास्तव, डॉ० संतोषकुमार भदौरिया, डॉ० रामानुज अस्थाना, डॉ० डी०एन० प्रसाद, डॉ० उमेशकुमार सिंह, डॉ० अशोकनाथ त्रिपाठी, डॉ० अनवर अहमद सिद्दिकी, बी०एस० मिरगे, मनोज कुमार राय, अमरेन्द्र कुमार शर्मा, अमित राय संदीप सपकाले, शैलेश कदम मर्जी, शंभु जोशी, रवि कुमार, अनिर्बान घोष, आनन्द मंडित मलयज, आशीष ठाणेकर, चन्द्रकान्त हिवरे आदि उपस्थित थे। उक्त अवसर पर शिक्षक एवं छात्रों के द्वारा रोचक प्रश्नादी पूछे गये जिसका संतोषजनक उत्तर वक्ताओं ने दिया। धन्यवाद ज्ञापन अहिंसा एवं शान्ति अध्ययन विभाग के प्रभारी डॉ० नृपेन्द्र प्रसाद मोदी ने किया।

'देवालयस्य दीपः' का लोकार्पण

डॉ० नाहीद आबिदी की पुस्तक
देवालयस्य दीपः का लोकार्पण
मानव संसाधन विकास मंत्री श्री अर्जुन सिंह द्वारा। साथ में हैं श्री वी० कुटुम्ब शास्त्री, कुलपति राष्ट्रीय संस्कृत संस्थान (मानित विश्वविद्यालय) नई दिल्ली

डॉ० नाहिद आबिदी के ग्रन्थ 'देवालयस्य दीपः' का लोकार्पण नई दिल्ली के सिरिफोर्ट आडिटोरियम में आयोजित समारोह में मानव संसाधन विकास मंत्री अर्जुन सिंह ने किया। समारोह का आयोजन राष्ट्रीय संस्कृत संस्थान (नई दिल्ली) द्वारा किया गया था। लेखिका के 'संस्कृत साहित्य में रहीम' नामक ग्रन्थ का लोकार्पण भी गत वर्ष श्री सिंह ने ही किया था। उर्दू के सर्वश्रेष्ठ शायर मिर्जाअसदुल्लाह खाँ 'गालिब' द्वारा रचित फारसी काव्य 'चेरागे-दैर' (मन्दिर का दिया) जो काशी की प्रशंसा में लिखा गया है अब तक फारसी भाषा के विद्वानों तक ही सीमित रहा। इस फारसी काव्य का पद्यानुवाद 'देवालयस्य दीपः' के नाम से डॉ० नाहीद आबिदी ने किया है। इस ग्रन्थ की भूमिका में लेखिका ने उन नवीनतम पक्षों को उद्घाटित किया है जिन पर अब तक प्रकाश नहीं डाला गया है।

डॉ० नाहीद आबिदी की पुस्तक पर बहुभाषाविद् मनीषी डॉ० कर्ण सिंह (एम०पी०), संस्कृत के महनीय विद्वान प्रो० श्रीनिवास रथ, पूर्व कुलपति प्रो० अभिराज राजेन्द्र मिश्र, प्रो० युगल किशोर मिश्र, प्रो० राधावल्लभ त्रिपाठी आदि ने शुभाशंसा लिखकर डॉ० आबिदी के इस ग्रन्थ की भूरि-भूरि प्रशंसा की है। डॉ० कर्ण सिंह (एम०पी०) ने लेखिका के इस ग्रन्थ को ''सर्वधर्म समभाव का अमर सन्देश देने वाला गंगा-जमुनी संस्कृति का प्रतीक कहा है।''

भारतीय काव्यशास्त्र की आचार्य-परम्परा
डॉ० राधावल्लभ त्रिपाठी
संस्करण : 2007
ISBN :
978-81-7124-568-0
विश्वविद्यालय प्रकाशन, वाराणसी
मूल्य : 180.00

गाँवों में किताबें

—अशोक महेश्वरी

देश भर में ग्रामीण पाठकों की स्थिति कमोबेश एक जैसी है। हमारा ग्रामीण समाज अनपढ़ नहीं है, लेकिन आज वह पुस्तकों से बहुत दूर चला गया है। आजादी से पहले विशेषकर उत्तर प्रदेश और बिहार में आठ-दस गाँवों के बीच एक अच्छा पुस्तकालय जरूर होता था। अपने समय की श्रेष्ठ पुस्तकें वहाँ आज भी मौजूद हैं। पुरानी पुस्तकों को देखने-पढ़ने के लिए लोग उन्हीं पुस्तकालयों की मदद लेते हैं।

हिन्दी पट्टी के गाँवों में आज भी प्रायः घरों में धार्मिक और कुछ लोकप्रिय पुस्तकें (किस्सा तोता-मैना, किस्सा हातिम ताई आदि) जर्जर हालत में मिल जाएँगी। लेकिन आजादी के पश्चात खास तौर पर बीती सदी के सत्तर-अस्सी के दशक के बाद ग्रामीण समाज पुस्तकों की पहुँच से दूर होता चला गया अथवा पुस्तकों ने उसे अपने से दूर कर दिया। इसकी वजहें भी साफ हैं। इसका पहला और सबसे अहम कारण है भाषा का व्यवहार। यानी कामकाज का माध्यम मातृभाषाएँ न रहकर अंग्रेजी हो गई। शिक्षा, स्वास्थ्य, कचहरी, यहाँ तक कि भारतीय भाषाओं के प्रकाशन संस्थानों का कामकाज भी अंग्रेजी में होने लगा। दूसरी वजह है, पुस्तकों का प्रकाशन केवल खड़ी बोली में होने लगना। भोजपुरी, अवधी, मालवी, मैथिली और ब्रज जैसी हमारे खून में रची-बसी बानी-भाखाओं (बोलियों-भाषाओं) के विकास और प्रकाशन को एकदम छोड़ दिया गया। ऐसी स्थिति आई, तो इसका एक वजह हिन्दी प्रकाशन और लेखन के केन्द्रों का धीरे-धीरे बड़े शहरों और महानगरों, खासकर दिल्ली तक सिमट जाना भी रहा। इससे कस्बों और गाँवों में रहने वाले लेखकों की पहुँच से प्रकाशक दूर होते चले गए।

पुस्तकों से विमुखता की और भी वजहें हैं। इस दौरान हुआ यह कि पुस्तकों का मूल्य निर्धारण पाठक को ध्यान में न रखकर थोक खरीद में दिए जाने वाले कमीशन के आधार पर होने लगा। इसके अलावा किताबें ऐसे विषयों पर प्रकाशित होने लगीं, जो सामान्य और ग्रामीण पाठकों के सिर के ऊपर से गुजर जाने लगीं। लेखन प्रयोगधर्मी ज्यादा हो गया, जिससे उसकी पठनीयता और लयात्मकता खत्म होती चली गई। प्रकाशन का उद्देश्य अफसर की खुशी होने लगा, पाठक की आँख की चमक नहीं। डाक व्यय के भयानक रूप से बढ़ जाने ने कोढ़ में खाज का काम किया। पाठ्य-पुस्तकों के राष्ट्रीयकरण से भी स्थिति बिगड़ी। प्रकाशक की आय का मुख्य स्रोत पाठ्य-पुस्तकें ही होती थीं। इन्हीं के सहारे वह साहित्यिक और अन्य लोकप्रिय विषयों की पुस्तकें भी छापता था। शायद इसी वजह से उस तरह के प्रकाशक मैदान छोड़कर भाग खड़े हुए। यही काफी नहीं है। धीरे-धीरे पुस्तकों पर मिलने वाले पुरस्कारों और पत्र-पत्रिकाओं में छपने वाली उनकी समीक्षाओं की विश्वसनीयता समाप्त हो गई। आज स्थिति यह है कि अंधा बाँटे रेवड़ी, अपनों-अपनों को देय।

जो होना था, वह तो हो गया। यदि हमें आज की इस गलाकाट प्रतियोगिता में खड़े रहना है, तो नई सोच के साथ ग्रामीण पाठक तक अपनी पहुँच बनानी ही होगी। इसके लिए कोई शॉर्टकट नहीं। ग्रामीण भारत में किताबों की पैठ फिर से बनानी है, तो कुछ कदम उठाने ही होंगे। मातृभाषाओं के माध्यम से ही लक्षित ग्रामीण पाठकों तक पहुँचा जा सकता है। यदि हमें ग्रामीण पाठकों तक पहुँचना है, तो अपना सारा कामकाज भारतीय भाषाओं में करना होगा।

गाँवों तक पहुँच के लिए पुस्तकों के विषय भी हमें ग्रामीण पाठकों की जरूरत और रुचि को ध्यान में रखकर तय करने होंगे। मोटे तौर पर वे खेती, भूमि कानून, स्वास्थ्य, रोजगार, महिला और नवसाक्षरों से सम्बन्धित हो सकते हैं। इसी तरह किताबों की कीमत पाठकों की जेब को ध्यान में रखकर तय करनी होगी। गाँवों तक पुस्तकों की पहुँच बनाने के लिए न्यूज एजेन्सियों, अखबार विक्रेताओं, खेती-किसानी का सामान और बीज बेचने वाली दुकानों तथा डाकघरों आदि का सहयोग लेना होगा। छोटे-छोटे बुक क्लब और साप्ताहिक हाट-बाजारों और मेलों तक पुस्तकों की पहुँच भी इस काम में सहयाक हो सकती है। कहते हैं कि केरल में गाँव-गाँव में, यहाँ तक की पान की दुकानों पर भी किताबें मिल जाती हैं।

गाँवों के पाठक किताबें तभी प्राप्त कर सकेंगे, जब उन्हें इनके बारे में जानकारी हो। इसके लिए हमें अखबार और टीवी का भी सहारा लेना होगा। रेडियो इसमें सबसे सहयोगी भूमिका निभा सकता है। बेशक मँहगे विज्ञापन हम नहीं दे सकते। लेकिन सर्वशिक्षा अभियान के नाम पर अरबों-खरबों रुपये खर्च करने वाली सरकार 15 अगस्त, 26 जनवरी और दो अक्टूबर जैसे अवसरों पर जारी होने वाले अपरिमित विज्ञापनों में देखवासियों को अच्छी पुस्तक पढ़ने के लाभ तो बता ही सकती है। दूसरी आजादी, जाहिर है, पुस्तकों के पठन-पाठन को बढ़ावा देकर ही मिलेगी।

ग्रामीण और पिछड़े इलाकों में पुस्तकें भेजने के लिए अलग डाक दरों का सुझाव भी केन्द्र सरकार को कई बार दिया जा चुका है। सरकार पोलियो से बचने के लिए टीकाकरण अभियान चलाती है। बड़े-बड़े नेता-अभिनेता इसका विज्ञापन करते हैं। क्या किताबों के बारे में ऐसे विज्ञापन तैयार नहीं किए जा सकते?

आर्थिक विकास की बयार गाँवों तक पहुँचने वाली है। ऐसे में, ग्रामीण समाज तक पुस्तकें पहुँचाने का यह उपयुक्त समय है।

पुस्तक समीक्षा

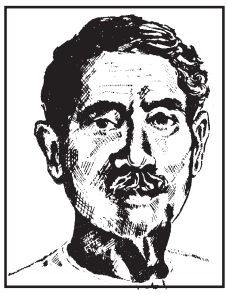

प्रेमचंद हिन्दी साहित्य के गाँधी

मुंशी प्रेमचंद वाम चेतना के समर्थ लेखक थे। वह गाँधी और मार्क्स दोनों से प्रभावित थे। उनकी कृतियों में इसके यथार्थ और जीवंत चित्रण के उदाहरण भरे पड़े हैं। गाँधी ने दलित को राजनीति का एजेण्डा बनाकर एक गैर राजनीतिक चीज को राजनीतिक बना दिया। प्रेमचंद के मानस में गाँधी घुसे थे। इसीलिए इनकी कृतियों में दलितों को बहुत महत्त्व मिला है। रंगभूमि उपन्यास में तो दलित ही नायक बना है।

राजनीति और साहित्य में एक बड़ा अन्तर यह है कि महापुरुष राजनीति से आता है और सांस्कृतिक पुरुष साहित्य से। राजनीतिक पुरुष अंतर्विरोधों से टकराता है लेकिन साहित्यकार के सामने ऐसी कोई बाध्यता नहीं होती। वह किसी भी चीज का अतिक्रमण कर सकता है। लेकिन अतिक्रमण करने के लिए सामर्थ्य चाहिए। वह सामर्थ्य प्रेमचंद में थी। इसीलिए प्रेमचंद महान और लोकप्रिय साहित्यकार बन सके। जो स्थान राजनीति में गाँधी का है वही साहित्य में प्रेमचंद का है। **—डॉ० पी०एन० सिंह**

करुणा से आक्रोश

प्रेमचंद के सामने यह प्रश्न था कि आक्रोश के माध्यम से करुणा पैदा करें या करुणा के माध्यम से आक्रोश। उन्होंने करुणा को चुना। वह अपने विवेक से करुणा पैदा कर आक्रोश पैदा करते हैं। होरी जहाँ मरता है वहीं से संघर्ष पैदा होता है। प्रेमचंद साहित्य को राजनीति के करीब लाना चाहते थे। उन्होंने इसके लिए किसान को चुना। जिस समय वह किसानों को नायक बना रहे थे उस समय पूरे देश में किसान आन्दोलन उत्कर्ष पर था। वह सामाजिक चिति के लेखक थे इसलिए अपनी रचनाओं से पूरे विश्व को प्रभावित कर सके। ऐसा लेखक कभी अप्रासंगिक नहीं होता। **—डॉ० शिवमूरत सिंह**

बात क्या है ?

(कविता-संग्रह)

गिरिधर करुण

संस्करण : 2007

ISBN : 978-81-7124-579-6

विश्वविद्यालय प्रकाशन, वाराणसी

मूल्य : 50.00

संस्कृत साहित्य का अभिनव इतिहास

डॉ० राधावल्लभ त्रिपाठी

परिवर्द्धित संशोधित संस्करण : 2007

ISBN : 978-81-7124-569-7

विश्वविद्यालय प्रकाशन, वाराणसी

मूल्य : (सजिल्द) 400.00 (अजिल्द) 250.00

इतिहास का लोक, अन्वेषण का अलोक

पिछली कई सदियों में इतिहास के भिन्न रूप रचे गए और आते रहे। संस्कृत समेत कई भाषाओं के साहित्य का इतिहास भी लिखा जाता रहा। मगर हम आगामी कदम उस बोध से बने इतिहास को मानते रहे जिसने पिछले कदम से आगे बढ़कर पुनरुद्धार की मुद्रा अपनायी। डॉक्टर राधावल्लभ त्रिपाठी द्वारा लिखित 'संस्कृत साहित्य का अभिनव इतिहास' विगत इतिहास ग्रन्थों से आगे बढ़कर इस भाषा के प्राप्य ऐतिहासिक व नवीन साहित्य का पुनरुद्धार करता दिखता है। लोकवृत्त को समझने और संस्कृत साहित्य की आभिजात्य शास्त्रीयतावादी धारा को परखने के साथ-साथ उन्होंने लोकधारा में सक्रिय रचनाकारों को भी ढूँढ़ा और उनके काव्य की प्रासंगिकता की परख भी की है।

इस पुस्तक में अनेक ऐसे श्रेष्ठ काव्यों का परिचय भी जोड़ा गया है, जो अब तक उपेक्षित या अल्पचर्चित रहे हैं।

संस्कृत के प्रमुख नाटकों का विवेचन त्रिपाठी जी ने नवीन दृष्टि से किया है। साथ ही रंगमंचीय प्रतिमानों के अनुसार नाटकों का मूल्यांकन किया है। कहीं-कहीं उनकी भाषा आधुनिक समीक्षकों को पछाड़ती हुई प्रतीत होती है। ऐसा कई प्रसंगों में उपस्थित होता है। मृच्छकटिक नाटक पर उनकी टिप्पणी देखें—मृच्छकटिक अँधेरे और उजाले का एक खेल है। त्रिपाठीजी नाटकों में निहित गूढ़ार्थों को भाषिक क्रीड़ा की सार्थकता के साथ हमारे समक्ष उपस्थित करते हैं। उन्होंने नाटकों अथवा रूपकों को रंगमंच के परिप्रेक्ष्य में ही समझा और परखा है। उन्होंने संस्कृत के मान नाटककारों की रंगदृष्टि को काफी बोधगम्य बनाकर प्रस्तुत किया है।

प्रस्तुत पुस्तक खोजी वृत्ति, नवीन सूचनाओं और समृद्ध प्रसंगों का वृत्तांत है। इसे एक जरूरी इतिहास-कृति के रूप में देखा जाना चाहिए।

—प्रदीप तिवारी, पुस्तक-वार्ता

खजुराहो की मूर्तिकला के सौन्दर्यात्मक तत्त्व

डॉ० (सुश्री) शरद सिंह

प्रथम संस्करण : 2006

ISBN : 81-7124-494-7

विश्वविद्यालय प्रकाशन, वाराणसी

मूल्य : 400.00

मध्यप्रदेश स्थित खजुराहो के मन्दिर अपनी स्थापत्यगत योजना और विशालता के लिए तथा मूर्तियाँ अपने अनुपम सौन्दर्य, आकर्षण, अलंकरण और तीखी भाव-भंगिमाओं के लिए विश्व-प्रसिद्ध हैं। देशी और विदेशी दोनों वर्गों के सर्वाधिक पर्यटक भारत के अतीत की सांस्कृतिक विरासत और उसके कला सौन्दर्य बोध को देखने और समझने के लिए खजुराहो आते हैं, जो सही मायने में मध्यप्रदेश का हृदय स्थल है। खजुराहो में वैदिक-पौराणिक एवं जैन परम्परा के 85 मन्दिरों के निर्माण की जनश्रुति मिलती है, जिनमें से कम से कम 30 छोटे-बड़े ब्राह्मण और जैन धर्मों के मन्दिर आज खजुराहो में देखे जा सकते हैं। खजुराहो का कला वैभव और विशाल मन्दिर तथा उन पर उकेरी सुन्दर मूर्तियाँ चन्देलों के गौरवशाली इतिहास की साक्षी हैं, जिन्होंने 10वीं से 12वीं शती ई० के मध्य खजुराहो को एक कला-तीर्थ के रूप में ऐसा स्थान बना दिया जो शताब्दियों के बाद भी अध्येताओं, सामान्य जिज्ञासुजनों एवं कला प्रेमियों के लिए अध्ययन साधना एवं दर्शन का मुख्य स्थल है।

खजुराहो की कला पर अब तक अनेक देशी एवं विदेशी विद्वानों ने महत्त्वपूर्ण कार्य किये हैं जो मन्दिर स्थापत्य, मूर्तिशिल्प, प्रतिमालक्षण तथा कला में अभिव्यक्त तत्कालीन सांस्कृतिक जीवन की अभिव्यक्ति से सम्बन्धित हैं। यह संयोग ही है कि खजुराहो की मूर्तिकला के सौन्दर्य तत्त्व पर अभी तक विस्तार से कोई स्वतन्त्र कार्य नहीं हुआ था। डॉ० सुश्री शरद सिंह का **खजुराहो की मूर्तिकला के सौन्दर्यात्मक तत्त्व** शीर्षक ग्रन्थ एक प्रारम्भिक किन्तु महत्त्वपूर्ण प्रयास के रूप में देखा जाना चाहिए। इस पुस्तक का अधिक उपयुक्त शीर्षक खजुराहो की मूर्तिकला में सौन्दर्य तत्त्व होता।

लेखिका ने अपने अध्ययन को कुल नौ अध्यायों में बाँटा है, जिसमें पहला अध्याय प्रस्तावना के रूप में खजुराहो की भौगोलिक एवं ऐतिहासिक पृष्ठभूमि से सम्बन्धित है जबकि दूसरे अध्याय में कला और सौन्दर्य की चर्चा प्राचीन शास्त्रों और कुछ मूर्त उदाहरणों के आधार पर की गयी है, जिसमें जैन तीर्थकरों तथा कुछ अन्य देवताओं के प्रतिमा लक्षणों का उल्लेख निश्चित

रूप से अनावश्यक है। यह अध्ययन कला और सौन्दर्य के अध्ययन की आधारभूमि तैयार करता है। लेखिका का यह कथन कि कला अपने सौन्दर्य की अभिव्यक्ति में ही पूर्णता प्राप्त करती है, पूरी तरह स्वीकार्य है। यह सौन्दर्य उकेरी मूर्तियों और मन्दिरों के स्वरूप में होता है और दर्शक की दृष्टि या भावानुभूति में भी। इस दृष्टि से लेखिका की सोच सही दिशा में आगे बढ़ती है कि खजुराहो की कला के सौन्दर्य तत्त्वों विशेषत: श्रृंगार भाव वाली मनभावन अप्सरा या नायिका मूर्तियों तथा काम शिल्प से सम्बन्धित मिथुन और मैथुन दृश्यों की व्याख्या इसी बात पर निर्भर करती है कि कला का सौन्दर्य और उसका श्लील या अश्लील होना उन मूर्तियों की अभिव्यक्ति में है या हमारी दृष्टि में। वास्तव में खजुराहो की ऐसी कलाकृतियों का मूल्यांकन कला सौन्दर्य की अभिव्यक्ति के स्तर पर और उनके निर्माणकर्ताओं के मानसिक और सामाजिक तथा धार्मिक पृष्ठभूमि में किया जाना चाहिए। इस सन्दर्भ में लेखिका का प्रयास प्रशंसनीय है।

तीसरे, चौथे और पाँचवें अध्यायों में वेशभूषा, प्रसाधन एवं अलंकरणों तथा उनके सौन्दर्य का अध्ययन हुआ है जिसमें विवरण अधिक है और समीक्षा कम। इन पक्षों पर पहले भी विद्याप्रकाशजी की 'खजुराहो' शीर्षक पुस्तक में बहुत कुछ लिखा जा चुका है। इस सन्दर्भ में भारतीय श्रृंगार पर कमल गिरि की पुस्तक का भी उपयोग किया जाना चाहिये था। मूर्तियों के स्थान और तिथिपरक सन्दर्भ भी सामान्यत: नहीं दिये गये हैं, जिससे ऐतिहासिक पृष्ठभूमि पूरी तरह नहीं उभर सकी है।

अगले तीन अध्यायों में नृत्य, गायन, वादन, संगीत, चित्रकला तथा युद्ध-आखेट एवं जीवन की अन्य गतिविधियों में अभिव्यक्त कला सौन्दर्य को रेखांकित किया गया है जबकि अगले दो अध्यायों में देवताओं के आयुधों एवं वाहनों तथा कुछ मांगलिक प्रतीकों और देव मूर्तियों के लक्षणों का विवरण दिया गया है। इन अध्यायों में वस्तुत: कला सौन्दर्य की चर्चा गौण हो गयी। देव प्रतिमा लक्षण की चर्चा प्रस्तुत अध्ययन में आवश्यक ही नहीं थी।

उपसंहार में खजुराहो की मूर्तिकला के वैशिष्ट्य की समीक्षा रूप और भाव दोनों ही स्तरों पर सौन्दर्य की अभिव्यक्ति की पृष्ठभूमि में प्रस्तुत की गई है। किन्तु समकालीन मूर्तिकला के साथ तुलनात्मक अध्ययन में कलचुरि एवं परमार कला के सौन्दर्य तत्त्व उजागर नहीं हो पाये हैं। प्रस्तर मूर्तियों के 64 चित्रों तथा रेखाचित्रों के माध्यम से लेखिका ने निश्चित ही अपनी बात को स्वर दिया है।

उपर्युक्त समीक्षा बिन्दुओं के बावजूद खजुराहो के कला सौन्दर्य के विविध पक्षों की जानकारी की दृष्टि से यह पुस्तक निश्चित ही महत्त्वपूर्ण है। इस ग्रन्थ के सुन्दर प्रकाशन के लिए विश्वविद्यालय प्रकाशन को भी धन्यवाद देना चाहिए जो प्राचीन भारतीय कला, एवं संस्कृति के विभिन्न पक्षों पर हिन्दी में लिखी पुस्तकों के प्रकाशन को निरन्तर प्रोत्साहित करता है।

—प्रो० मारुतिनन्दनप्रसाद तिवारी
पूर्व विभागाध्यक्ष, कला-इतिहास विभाग
कला संकाय
काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी

तुम शिव नहीं हो!

(कविता संग्रह)

आभा गुप्ता ठाकुर

प्रथम संस्करण : 2007
ISBN : 978-81-7124-585-7
विश्वविद्यालय प्रकाशन, वाराणसी
मूल्य : 50.00

आभा गुप्ता ठाकुर का प्रथम काव्य-संग्रह 'तुम शिव नहीं हो!' युगों से स्त्री के जीवन को घेरनेवाली समस्याओं एवं सवालों की अत्यन्त सार्थक और प्रभावशाली अभिव्यक्ति है। कवयित्री का सहृदय मन नारी की स्थिति पर आँसू नहीं बहाता क्योंकि आँसू बहाकर किसी व्यवस्था को नहीं बदला जा सकता है। इसलिए वे मानव जीवन विशेषकर स्त्री-पुरुष सम्बन्ध की वास्तविकता का बड़े साहस के साथ गैर रोमानी ढंग से खुलासा करती हैं। अपने में सिमटते संवेदनहीन होते समाज की उदासीनता कवयित्री को व्यथित करती है और अपनी कविता के माध्यम से वे ऊबे हुए सुखी लोगों को झकझोरने का प्रयास करती हैं।

अपनी कविता के माध्यम से मानव जीवन के जिस यथार्थ का वे उद्‌घाटन करती हैं, उसके लिए भाषा, बिम्ब और प्रतीकों का चयन वे सामान्य जीवन से करती हैं। घर-आँगन खेत-खलिहान नदी, रेत और राग-विराग के ताने-बाने से बुना गया जीवन का रंग पाठक को सहज ही बाँध लेता है। इस काव्य-संग्रह में तराशने के श्रम की थकान नहीं है, बल्कि नदी के प्रवाह जैसी सहजता है जिसमें कवयित्री के व्यक्तित्व की रेखाएँ साकार हो उठती हैं।

रंग दस्तावेज

सौ साल
(1850-1950)
(दो खण्डों में)

महेश आनन्द

राष्ट्रीय नाट्य विद्यालय,
बहावलपुर हाउस, 1
भगवानदास रोड,
नई दिल्ली-110001

पृष्ठ : 1200 मूल्य : 2500.00 (दोनों खण्ड)

इतिहास के जिस कालखण्ड में भारतीय जन-गण अपनी अस्मिता की नयी पहचान और अपने जातीय गौरव के अन्वेषण के लिए जद्दोजहद कर रहा था, उस समय हिन्दी रंगमंच की क्या स्थिति थी, वह कैसे-कैसे विधि-निषेधों, किन सीमाओं और किन आकांक्षाओं से जूझ रहा था, यह जानने के लिए 'रंग दस्तावेज' सम्भवत: हिन्दी में उपलब्ध पहला एकीकृत और प्रामाणिक स्रोत है। इसके दो खण्डों में 1850 से 1950 के दौरान विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित रंगमंच सम्बन्धी टिप्पणियों, लेखों और बहसों को यथावत प्रस्तुत करते हुए उनका विश्लेषण भी किया गया है। इससे हमें तत्कालीन रंग परिवेश की सामाजिक, राजनीतिक दृष्टि और एक जनमाध्यम के रूप में उसकी शक्ति का एक पूरा खाका उपलब्ध हो जाता है। इसके अलावा तकनीक के उस शैशवकाल में थिएटर की प्रचार-प्रसार और सांगठनिक गतिविधियों से भी यह पुस्तक हमें परिचित कराती है। अनेक पत्रिकाओं के मुखपृष्ठों, मंचनों के पोस्टरों और विज्ञापनों की दुर्लभ छायाकृतियों से सम्पन्न यह पुस्तक हमें थिएटर के उस संसार से परिचित कराती है, जिसमें सम्भवत: हमारे आज के कुछ सवालों के जवाब भी छिपे हुए हैं। शोधार्थियों, विद्यार्थियों और सामान्य पाठकों के लिए समान रूप से पठनीय और संग्रहणीय पुस्तक।

प्राचीन भारत के प्रमुख अभिलेख भाग-2

डॉ० परमेश्वरीलाल गुप्त

संस्करण : 2007
विश्वविद्यालय प्रकाशन, वाराणसी
मूल्य : 100.00

प्राचीन भारत के प्रमुख अभिलेख के इस दूसरे खण्ड में गुप्त सम्राटों के काले 61 अभिलेख हैं। शोध-पत्रिकाओं में यत्र-तत्र बिखरे इन अभिलेखों के मूल पाठ, उनके अनुवाद और आवश्यक सूचनात्मक टिप्पणी सहित प्रस्तुत किए गए हैं। अनुवाद करते समय यथा सम्भव पूर्ववर्ती विद्वानों का अनुसरण करने का प्रयास किया गया है, किन्तु जहाँ कहीं विसंगति दिखी उसका संकेत भी कर दिया गया है। लेखक के मुद्रा तत्त्व से विशेष लगाव होने के कारण उनसे उपलब्ध जानकारी भी समाविष्ट की गई है।

पूर्व मध्यकालीन जैन कला

डॉ० अवधेश यादव

संस्करण : 2007
ISBN :
81-7124-538-2
विश्वविद्यालय प्रकाशन,
वाराणसी
मूल्य : 250.00

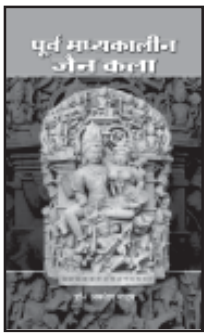

पुस्तकें प्राप्त

डपोर शंख : 'डपोर शंख' परिचित व्यंग्यकार के० दहिया द्वारा समय-समय पर लिखे व यत्र-तत्र प्रकाशित 58 व्यंग्यों का पहला संग्रह है। 'गुरु गांगुली दोउ खड़े' व 'भत्तों में भत्ता, मँहगाई भत्ता' जैसे नये व प्रासंगिक विषयों सहित समाज की तमाम विसंगतियों को रोचक अंदाज में चित्रित किया गया है। पुस्तक पाठकों को गुदगुदाने, हँसाने के साथ-साथ चिन्तन करने के लिए भी बाध्य करती है। के०के० पब्लिकेशन्स, इलाहाबाद द्वारा प्रकाशित 'डपोर शंख' व्यंग्य संग्रह की कीमत 58 रुपये है।

लोक वातायन : अनुसंधान प्रकाशन, बरेली ने कैलाश त्रिपाठी का दूसरा निबन्ध-संग्रह 'लोक वातायन' प्रकाशित किया है। लघु पत्र-पत्रिकाओं में अनवरत लेखन करने वाले कैलाश त्रिपाठी के इस संग्रह में कुल 27 निबन्ध लेखक की सामाजिक दृष्टि से परिचय कराते हैं। संग्रह श्री त्रिपाठी के व्यक्तिगत जीवन व रचनात्मक सामर्थ्य के मूल्यांकन हेतु भी उपयोगी है। पुस्तक का मूल्य 200 रुपये है।

इन्द्रधनुष : किंग्स जार्ज मेडिकल कालेज, लखनऊ के सेवानिवृत्त 'प्रोफेसर ऑफ सर्जरी' त्रिलोकचन्द्र गोयल की हिन्दी व अंग्रेजी में कुल 144 कविताओं का संग्रह 'इन्द्रधनुष' नाम से आरगो पब्लिशिंग हाउस, लखनऊ ने प्रकाशित किया है। डॉ० टी०सी० गोयल की ये कविताएँ एक टीचर-सर्जन के खाली क्षणों की छिटपुट अभिव्यक्ति हैं। सरकारी नौकरी में रहकर एक व्यस्त जीवन जीने वाला आदमी जब एकान्त पाकर आम व्यक्ति की तरह सोचना शुरू करता है जब उसकी संवेदना व्यवस्था से आहत जनमानस का चित्र बनाने हेतु उकसाती है। डॉ० टी०सी० गोयल की कविताएँ उनके पेशे से भी जुड़ी हैं लेकिन चिकित्सकीय शब्द-भाषा में नहीं, अपितु स्वच्छन्द साहित्यिक रूप में व्यंजना व संदेशों से भरी हैं। डॉ० गोयल की इस पुस्तक का सातवाँ संस्करण अभी-अभी प्रकाशित हुआ है।

वैदिक हवन पद्धति : भगवद्गीता में श्रीकृष्ण ने कहा है कि ''प्रभु ने यज्ञ से संसार को पैदा किया।'' भारत में यज्ञ की पौराणिक परम्परा से परिचित कराने वाली महत्त्वपूर्ण पुस्तक 'वैदिक हवन पद्धति' को हिन्दी-अंग्रेजी में समवेत प्रकाशित किया है नई दिल्ली के ईमेज इण्डिया पब्लिकेशन्स ने। संकलन मधु वार्ष्णेय, तथा सम्पादन दयानन्द 'अर्पण' का है। पुस्तक की कीमत 150 रुपये है।

मस्तानी : इतिहास में अनेक ऐसे पात्र हुए हैं जिनके सम्बन्ध में कई कारणों से ग्रन्थों में विस्तृत चर्चा नहीं हो पाई। किन्तु वे पात्र अपनी विशेषता के कारण चर्चित रहे। ऐसे ही इतिहास को पुनर्जीवित करने वाला एक उपन्यास 'मस्तानी' पटना के प्रतिभा प्रकाशन से प्रकाशित हुआ है। चर्चित उपन्यासों 'पाटलिपुत्र की राजनर्तकी कोशा' और 'पुनर्लग्न' के लेखक कृष्णानन्द का यह नया उपन्यास है। इस उपन्यास में तीन पुरनारियों के प्रेम प्रसंग का वर्णन है जो 18वीं सदी प्रसिद्ध नर्तकियाँ थीं। छत्रसाल, घनानंद तथा भूषण के उद्धृत पदों से संयोजित इस रचना में लेखक की कल्पनाशक्ति व साहित्यिक सम्प्रेषण क्षमता से परिचित हुआ जा सकता है। पुस्तक संग्रहणीय व पठनीय है। मूल्य 240 रुपये है।

जाने-माने विचारक

हृदयनारायण दीक्षित

की तीन पुस्तकें

1. भारतीय समाज : राजनीतिक संक्रमण
2. सांस्कृतिक अनुभूति : राजनीतिक प्रतीक
3. भारतीय संस्कृति की भूमिका

शीघ्र प्रकाश्य

सम्पादक : **एल. उमाशंकर सिंह**

प्रकाशक : विश्वविद्यालय प्रकाशन, चौक, वाराणसी

भारतीय वाङ्मय

मासिक

वर्ष : 8 **अक्टूबर 2007** **अंक : 10**

प्रधान संपादक

पुरुषोत्तमदास मोदी

संपादक : **परागकुमार मोदी**

वार्षिक शुल्क : रु० 50.00

अनुरागकुमार मोदी

द्वारा

विश्वविद्यालय प्रकाशन, वाराणसी

के लिए प्रकाशित

वाराणसी एलेक्ट्रॉनिक कलर प्रिण्टर्स प्रा० लि०

वाराणसी *द्वारा मुद्रित*

डाक रजिस्टर्ड नं० ए डी-174/2003 RNI No. UPHIN/2000/10104

प्रेस रजिस्ट्रेशन एक्ट 1807 ई० धारा 5 के अन्तर्गत

Licenced to post without prepayment at

G.P.O. Varanasi

Licence No. LWP-VSI-01/2001

सेवा में,

प्रेषक : (If undelivered please return to :)

☎ : Offi. : (0542) 2421472, 2413741, 2413082, (Resi.) 2436349, 2436498, 2311423 ● Fax: (0542) 2413082

E-mail : sales@vvpbooks.com ● Website : **www.vvpbooks.com**

विश्वविद्यालय प्रकाशन

प्रमुख प्रकाशक एवं पुस्तक विक्रेता

(विविध विषयों की हिन्दी, संस्कृत तथा अंग्रेजी पुस्तकों का विशाल संग्रह)

विशालाक्षी भवन, पो०बाक्स 1149

चौक, वाराणसी-221 001 (उ०प्र०) (भारत)

VISHWAVIDYALAYA PRAKASHAN

Premier Publisher & Bookseller

(BOOKS IN HINDI, SANSKRIT & ENGLISH FOR STUDENTS, SCHOLARS, ACADEMICIANS & LIBRARIAN)

Vishalakshi Building, P.O. Box : 1149

Chowk, VARANASI-221 001(U.P.) (INDIA)